उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

हल्द्वानी

CHBC - 02

सर्टिफिकेट इन हर्बल ब्यूटि केयर

त्वचा एवं संबंधित रोग

विशेषज्ञ समिति

डा0 वी0 पी0 उपाध्याय प्राचार्य, हिमालयीय आयुर्वेदिक कालेज श्यामपुर , ऋषिकेश	डा0 एन0 पी0 सिंह निदेशक, स्वास्थ्य विज्ञान विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रो0 आर0 बी0 सती रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग ऋषिकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज हरिद्वार	डा0 जे0 एन0 नौटियाल पंचकर्म विशेषज्ञ दून चिकित्सालय देहरादून
डा0 वन्दना पाठक आयुर्वेदिक मेडिकल आफिसर कानपुर	डा0 सी0 एस0 भागवत पूर्व रीडर द्रव्यगुण विभाग आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज झांसी
डा0 सोहन खण्डूरी शैक्षिक परामर्शदाता (अंशकालिक) उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,	डा0 समीर सिंह लेक्चरर उत्तराखंण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

कार्यक्रम समन्वयक डा0 समीर सिंह डा0 सोहन खंण्डूरी

पाठ्यक्रम लेखन एंव सामग्री संकलन

डॉ0 वन्दना पाठक आर्युवेदिक मेडिकल ऑफिसर कानपुर	डॉ0 समीर सिंह लेक्चरर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन

प्रो0 आर0 बी0 सती रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग ऋशिकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज हरिद्वार	डॉ0 यू0के0 शर्मा, पंचकर्म विभाग ऋषिकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज हरिद्वार

कुलसचिव उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुद्रक

उत्तरायण प्रकाषन, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय

सर्वधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिये बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

अधिक जानकारी उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल से प्राप्त कर सकते हैं।

नोट– पाठ्यक्रम से संबंधित आपके सुझावों का हम स्वागत करते हैं। कृपया अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें–स्वास्थ विज्ञान विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

CABC - 02

सर्टिफिकेट इन आयुर्वेदिक ब्यूटि केयर

त्वचा एवं संबंधित रोग

इकाई - 1

त्वचा का सामान्य परिचय - 01

इकाई - 2

विभिन्न त्वचा संबंधित रोग -24

इकाई - 3

सौन्दर्य एवं हमारा शरीर - 55

इकाई – 4

अभ्यंग का महत्व - 64

इकाई – 1

त्वचा का सामान्य परिचय

प्रस्तावना : – सौन्दर्य वर्धन के उपाय त्वचा रोगों की चिकित्सा अथवा अभ्यंग इत्यादि हेतु विद्यार्थियों के लिए त्वचा की विभिन्न कलाओं, उपांग इत्यादि का ज्ञान अतिआवश्यक है।

इस इकाई द्वारा विद्यार्थी निम्न बिन्दुओं पर ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

त्वचा की विभिन्न परते (चित्र सहित)

अन्तस्त्वचा में स्थित अंगक

अ. रक्त वाहिनियॉ

ब. स्पर्श कणिका

स. स्वेद ग्रन्थियॉ

ड. त्वग्वसीय ग्रन्थियॉ

त्वचा के उपांग

अ. केश (चित्र सहित)

ब. नख (चित्र सहित)

स. रोम (चित्र सहित)

त्वचा का आयुर्वेद मतानुसार वर्णन

अ. महर्षि चरकानुसार

ब. महर्षि –सुश्रुतानुसार

त्वचा के कार्य

1. त्वचा का सामान्य परिचय
2. त्वचा का चित्र (Diagram of skin)
3. त्वचा के उपांग
4. त्वचा के कार्य
5. एड्स टु हेल्थि स्किन
6. मस्तिष्क का त्वचा पर प्रभाव

त्वचा का सामान्य परिचय

इस संस्थान या तन्त्र के अन्तर्गत त्वचा एवं इसकी व्युत्पत्तियों (derivatives) बाल, नाखून, तथा स्वेद एवं तैलीय ग्रन्थियों का समावेश होता है।

शरीर के ऊपरी आवरण (integument) को 'त्वचा' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। शरीर का इन्टेगुमेन्टरी संस्थान अर्थात् त्वचा एक महत्वपूर्ण संस्थान (तन्त्र) है, क्योंकि इसके द्वारा अनेक जीवनोपयोगी क्रियाएँ सम्पादित होती है। त्वचा शरीर और वातावरण के मध्य सीमान्त या सीमा बन्धक मेम्ब्रेन है, जिसके माध्यम से तमाम वस्तुओं का विनियम होता रहता है। इस तरह से त्वचा शरीर के ऊतकों तथा बाहय वातावरण के बीच एक रोधी भित्ति का कार्य करती है, वातावरण–संचारेक्षण के लिए यह ज्ञानेन्द्रिय का कार्य करती है तथा शरीर का तापक्रम नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

त्वचा के द्वारा सम्पादित होने वाले शरीरोपयोगी कार्यो को समझने के लिए त्वचा की संरचना का अध्ययन अनिवार्य है। संरचना के अनुसार, त्वचा मुख्यतः दो परतों से मिलकर बनी होती हैं–

(i) बह्मा त्वचा या एपीडर्मिस (Epidermis)

(ii) अन्तस्त्वचा या डर्मिस (Dermis)

ये दोनों परतें कई परतों में उपविभाजित हो जाती हैं। ये दोनों परत एक महीन, आकारविहीन आधारीय कला (basement membrane) से एक–दूसरे से पृथक् रहती है। डर्मिस के नीचे ढीले संयोजी ऊतकों की एक परत रहती है, जिसे हाइपोडर्मिस (hypodermis) कहते हैं। एपीडर्मिस बहिर्जन परत (ectoderm) से तथा डर्मिस और उसके नीचे के ऊतक मध्यजन परत (mesoderm) से निर्मित होती है।

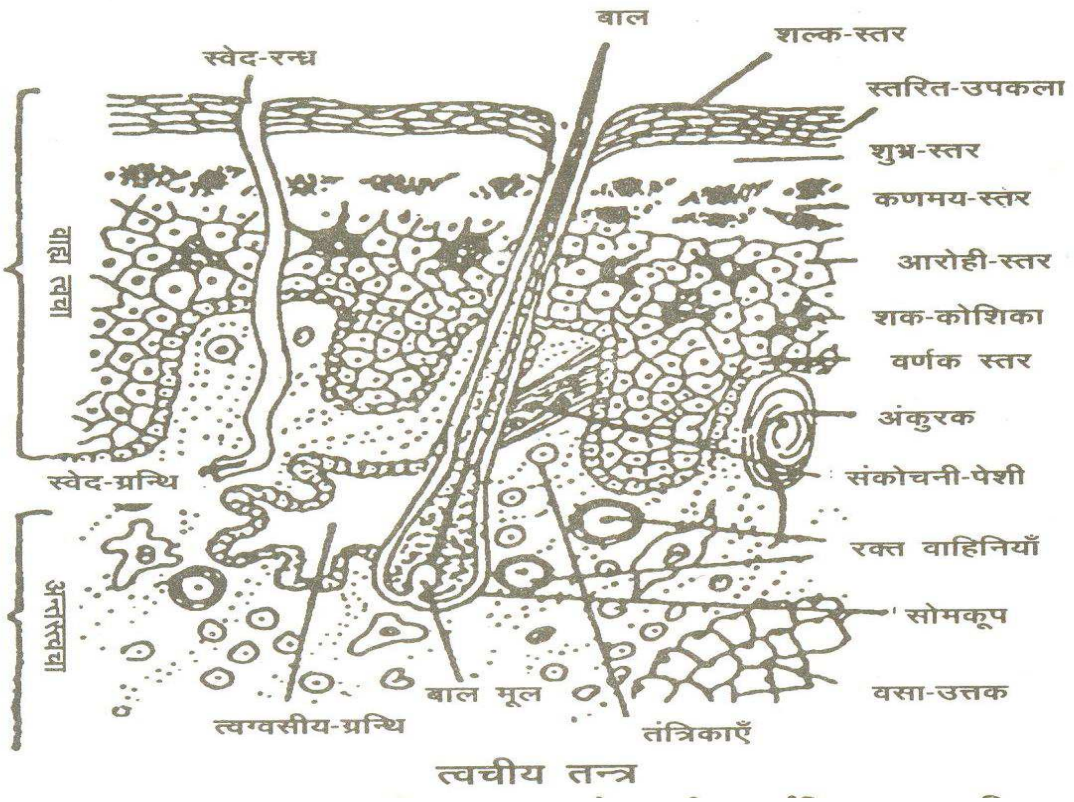

त्वचीय तन्त्र

1. बाह्य त्वचा या एपीडर्मिस **(Epidermis)**

यह त्वचा की उपरिस्थ परत होती है, जो स्तरित उपकला (stratified epithelium) की कई परतों से मिलकर बनी होती है। यह शरीर के विभिन्न भागों में विभिन्न मोटाई की होती है, जैसे हथेलियों और तलवों आदि पर बहुत मोटी एवं सख्त रहती है, तथा धड़, पलकों, होठों एवं हाथ–पैरों की अन्दरूनी सतहों पर बहुत पतली एवं कोमल रहती है। बाह्य त्वचा में कोई तन्त्रिका अन्तांग (nerve endings) तथा रक्त वाहिनियॉ विद्यमान नहीं होती, परन्तु अधिकांशतः इतनी पतली होती है, कि हल्का–सा कट भी डर्मिस तक पहुॅच जाता है और रक्त बहने लगता है। बह्मा त्वचा पारदर्शी तथा जल–अभेद्य होती है। जल, जीवाणु तथा कुछ रासायनिक पदार्थ इसे पार करके अन्दर प्रवेश नहीं कर सकते हैं, परन्तु तैलीय पदार्थ इसमें स्वच्छंदता से अवशोषित हो जाते है।

बाहय त्वचा में कोशिकाओं की रचना, व्यवस्था, आकृति एवं आकार विभिन्न प्रकार के रहते हैं और इसी आधार पर इनकी पृथक–पृथक परतें हैं। इनकी चार परतें होती है। बाहर से अन्दर की ओर इनकी स्थिति निम्न क्रम में रहती है–

(i) शल्की परत या स्ट्रैटम कॉर्नियम (Stratum corneum)

(ii) स्वच्छ परत या स्ट्रैटम ल्यूसिडम (Stratum lucidium)

(iii) कणिकामय परत या स्ट्रैटम ग्रैन्यूलोसम (Stratum granulosum)

(iv) प्रारोही या अंकुरक परत या स्ट्रैटम जर्मिनेटिवम (Stratum germunativum)

(i) **शल्की परत (Stratum corneum)** – यह परत शरीर में सबसे बाहर की अर्थात् सतही परत होती है। इसमें विद्यमान कोशिकाएँ चपटी, पतली, न्यूक्लियस रहित और मृत होती हैं, जिनमें प्रोटोप्लाज्म का स्थान केराटिन (keratin) नामक तन्तुमय प्रोटीन ले लेती है, जो जलरोधक होती है। ये कोशिकाएँ स्वभाविक विनाश और घर्षण आदि से आजीवन झड़ती रहती है। इस परत की कोशिकाएँ अत्यधिक दृढ़ एवं कठोर होती है और इसे श्रृंगी परत (Horny layer) भी कहा जाता है।

(ii) **स्वच्छ परत (Stratum lucidium)**– यह परत अत्यन्त पतली और कुछ पारदर्शी होती है। इसकी कोशिकाएँ चपटी, स्वच्छ तथा पारदर्शी होती है। इस परत में विद्यमान कोशिकाओं की बह्मा रेखा और सीमा दोनों ही इतनी अस्पष्ट होती है, जिसके कारण पूरी परत अवकल और संमाग (homogeneous) दिखाई देती है। इनमें केन्द्रक (न्यूक्लियस) नहीं होता है।

(iii) **कणिकामय परत (Stratum granulosum)**– यह परत स्पष्ट आकार की बड़ी तथा चपटी बहुतलीय (polyhedral) कोशिकाओं से निर्मित होती है, जिनमें न्यूक्लियस और कणिकाएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देते है।

(iv) **प्रारोही या अंकुरक परत (Stratum germunativum)**– यह परत काफी चौड़ी और मोटी होती है तथा बड़ी–बड़ी कोशिकाओं से बनी होती है। इस परत की कोशिकाएँ आकार में स्तम्भाकार (columnar) होती हैं तथा इनमें न्यूक्लियस विद्यमान होता है। इनसे

नई कोशिकाओं की उत्पत्ति होती है, जो धीरे–धीरे सतह की ओर को बढ़ती चली जाती हैं और उनमें परिवर्तन होता जाता है। यह परत दो तरह की परतों–स्ट्रैटम स्पाइनोसम (stratum spinosum) तथा स्ट्रैटम बेसली (stratum basale) नामक परतों से मिलकर बनी होती हैं।

स्ट्रैटम स्पाइनोसम परत में विभिन्न आकारों वाली कोशिकाएँ रहती हैं, जिनमें प्रत्येक में कॉटे जैसे–छोटे–छोटे उभार होते हैं, जो एक–दूसरे से सूक्ष्म तन्तुकों (fibrils) द्वारा जुंड़े रहते हैं, ये कोशिकाएँ **'शक–कोशिका'** (Prickle cell) कहलाती है।

स्ट्रैटम बेसली परत आधारीय कला पर जीम हुई घनाकार कोशिकाओं की बनी एकल परत होती है। इन्हीं कोशिकाओं से निरन्तर नयी बह्मा त्वचीय कोशिकाओं की कोशिका विभाजन द्वारा उत्पत्ति होती रहती है। इसी परत में वर्णक कोशिकाएँ (melanocytes) पायी जाती हैं। जिनसे मैलेनिन (melanin) नामक वर्णक (पिगमेन्ट) की उत्पत्ति होती है। इन्हीं वर्णक कोशिकाओं के परिमाण पर त्वचा का रंग निर्भर करता है। ये जितनी कम होती हैं त्वचा का वर्ण उतना ही स्वच्छ (fair complexion) होता है तथा इनकी मात्रा जितनी अधिक रहती है, त्वचा को उतना ही श्याम–वर्ण (dark complexion) प्राप्त होता है।

वर्णक (पिगमेन्ट) का कार्य सूर्य की किरणों का अवशोषण कर लेना है और इस किया के फलस्वरूप सूर्य की तेज किरणों से त्वचा की रक्षा होती है। इस पिगमेन्ट के कारण ही उष्णप्रधान देशों के व्यक्तियों को अधिक गर्मी एवं ताप को सहन करने की क्षमता मिलती है।

2. अन्तस्त्वचा (Dermis)

अन्तस्त्वचा (डर्मिस) को वास्तविक त्वचा भी कहा जाता है। इसका निर्माण कोलेजनमय प्रत्यास्थ संयोजी ऊतकों, रेटीकुलर एवं इलास्टिक तन्तुओं से होता है। कोलेजनमय तन्तु जो प्रोटीन कोलेजन से बने होते हैं, बहुत ही मोटे होते हैं, जिससे अन्तस्त्वचा कठोर होती है तथा इलास्टिक तन्तुओं के कारण इसमें लचीलापन रहता है। इसमें प्रायः फाइब्रोब्लास्ट्स (fibroblasts), वसा कोशिकाएँ (fat cells) एवं मेक्रोफेजेज (macrophages), होती हैं, जो बह्मा पदार्थो का भक्षण (digest), करती हैं। इसमें रक्तवाहिनियों, लसीका वाहिनियॉ, तन्त्रिकान्त (nerve endings), रोम कूप (hair follicles), स्वेद ग्रन्थियॉ (sweat glands),, त्वग्वसीय ग्रन्थियॉ (sebaceous glands), वसा ऊतक (adipose tissues), एवं अल्प मात्रा में अनैच्छिक पेशी तन्तु (involuntary muscle fibres) विद्यमान रहते है।

अन्तस्त्वचा का ऊपरी भाग बह्मा पैपीलरी स्तर तथा नीचे का **अन्तः रेटीकुलर स्तर** कहलाता है। दोनों स्तरों (layers) को स्पष्ट रूप से पृथक नहीं किया जा सकता है। अन्तस्त्वचा की सबसे निचली परत विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न मोटाई की होती है, इसे **अधस्त्वक या अवत्वचीय परत** (subcutaneous layer), कहा जाता है। इसमें संयोजी ऊतक ही रहते हैं, परन्तु वसा की कम या अधिक मात्रा रहती हैं। अवत्वचीय परत शरीर के किन्हीं भागों में अधिक मोटी तथा किन्हीं भागों में पतली रहती है। इनसे शरीर की सतह की असमानता दूर होती हैं और गहराइयॉ भर जाती है। त्वचा के समीप तक आई अस्थियों को इनसे गद्दीदार सहारा मिलता है। वसा की मात्रा पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक रहती है।

डर्मिस या अन्तस्त्वचा स्थित अंगक (Organs in dermis)

1. रक्त वाहिनियॉ (Blood Vessels)

डर्मिस में रक्तवाहिनियॉ प्रचुर मात्रा में रहती हैं। इन्हीं से त्वचा की दोनों प्रमुख परतों का भरण–पोषण होता है। रक्त कोशिकाएँ तथा रक्त–शिराएँ शुद्ध रक्त को लाने तथा अशुद्ध रक्त को ले जाने का कार्य करती है। रक्तवाहिनियॉ डर्मिस में सघन जाल के रूप में रहती हैं और अंकुरकों (papillies) में तो ये गुच्छों के रूप में अवस्थित रहती हैं।

त्वचा की वाहिका संरचना (vascular architecture) बड़े ही संश्लिष्ट ढंग की है। डर्मिस की सबसे निचली परत में अनियमित आकार की अति संशाखनमयी धमनी जालिका रहती है, जो प्रथम जालिका (first plexus) बनाती है। इनसे द्वितीय जालिका (second plexus) निकलती है, जो कुछ ऊपर उठकर बनती हैं। इन्हीं में से तृतीय जालिका (third plexus) निकलकर ठीक बह्मा त्वचा तक पहुॅच जाती है। इन तीनों जालिकाओं में से अतिसूक्ष्म कोशिकाएँ फूटती हैं और समीपस्थ त्वचा स्थित अंगों को रक्त एवं पोषण प्रदान करती हैं। यहीं से निकलकर कोशिकाएँ अंकुरकों, रोमकूपों आदि में पहुॅचती हैं।

2. स्पर्श कणिका (Tactile corpuscles)

डर्मिस के अंकुरकों में तन्त्रिका तन्तुओं स्पर्श कणिकाएँ (टैक्टाइल कॉर्पसल्स) विद्यमान रहती हैं। वस्तुतः ये अण्डाकार आकृति की तन्त्रिका अन्तांग (nerve endings) ही हैं। इन्हीं के द्वारा स्पर्श की संबा ऊष्मा, ठण्ड, दबाव एवं वेदना का बोध होता है। ये स्पर्श कणिकाएँ सभी स्थानों पर समान रूप से सघन नहीं हैं। ये उँगलियों के सिरों तथा हथेली में सबसे अधिक होती है।

3. स्वेद ग्रन्थियॉ (Sudoriferous glands or sweat glands)

स्वेद ग्रन्थियॉ डर्मिस (वास्तविक त्वचा) की गहराई में तथा अवत्वचीय ऊतक मे स्थित रहती हैं। प्रत्येक स्वेद ग्रन्थि एक सूक्ष्म कुण्डलित नली (tiny coiled tube) के रूप में होती है, जिसमें एक सर्पिल (spiral) उत्सर्गी वाहिनी (excretory duct) होती हैं, जो एक छिद्र द्वारा त्वचा की सतह पर खुलती है। समस्त शरीर के डर्मिस में असंख्य ग्रन्थियॉ अवस्थित रहती हैं। ये शरीर के किन्हीं स्थानों पर अधिक तथा किन्हीं स्थानों पर कम होती हैं। स्वेद (पसीना) दृश्य अथवा अदृश्य रूप में, इन छिद्रों से निरन्तर निकलता रहता है। स्वेद ग्रन्थियॉ सबसे अधिक हथेलियों में तथा पावों के तलवों में पायी जाती हैं। इन स्वेद ग्रन्थियों में रक्त के विकार छनते हैं तथा वहीं से ये स्वेद अर्थात् पसीने के रूप में त्वचा के ऊपर आकर वाष्पित हो जाते है।

स्वेद अर्थात् पसीना, स्वेद ग्रन्थियों से स्रावित होने वाला सक्रिय स्राव है, जो जल, लवण एवं अन्य अल्प व्यर्थ पदार्थो का बना होता है। शुद्ध पसीना तनु जलीय घोल होता है, जिसकी प्रकृति न्यूट्रल (उदासीन) रहती है। पसीने का अधिकांश भाग त्वचा की सतह पर पहुॅचकर तुरन्त वाष्पित हो जाता है। इसे अदृश्य (Insensible) पसीना कहते हैं। जब पसीना जलीय बिनदुओं के रूप में त्वचा पर

जमा हो जाता है और त्वचा पसीने से तर हो जाती है, तो इसे दृश्य (Sensible) पसीना कहते हैं। एक सामान्य स्वस्थ वयस्क के शरीर से 24 घन्टों में औसतन 500–600 मि0ली0 पसीना उत्सर्जित होता है। गरम मौसम और अधिक परिश्रम के दौरान पसीना अधिक निकलता है। मानसिक उद्वेग की अवस्था में पसीना हथेलियों, तलवों तथा कॉखों (axillae) पर अधिक दृष्टिगोचर होता है। स्वेद ग्रन्थियों की सक्रियता तंत्रिका–तन्त्र (nervous system) पर भी निर्भर करती है। अत्यधिक मिर्च–मसाले वाले खाद्य–पदार्थो के सेवन करने पर, मुख में स्थित तन्त्रिका–अन्तागों (nerve endings) के उतेजित हो उठने से, स्वतः सिर तथा गर्दन के आस–पास पसीना निकलने लगता है। कभी–कभी अनुकम्पी क्रियाओं (sympathetic activities) जैसे– मतली, वमन, मूर्च्छा, अल्प रक्त शर्करा (hypoglycaemia), श्वासावरोध आदि की हालत में भी पसीना उत्पन्न होने लगता है।

पसीना हमारे शरीर में ताप–नियन्त्रण, जल–सन्तुलन, लवण सन्तुलन, एसिड–बेस नियमन, उत्सर्जन तथा त्वचा को सूखने से बचाने के लिए नम रखने का कार्य करता है।

4. त्वग्वसीय ग्रन्थियॉ (Sebaceous glands)

ये नाशपाती या फ्लास्क के आकार की छोटी–छोटी डर्मिस में स्थित ग्रन्थियॉ हैं, जिनके मुख रोम कूपों (hair follicles) के समीप खुलते हैं। इन ग्रन्थियों से स्रावित होने वाले तैलीय पदार्थ को त्वग्वसा या सीबम (sebum) कहते हैं। त्वग्वसा का निर्माण, त्वचा की वाहिकामयता के परिवर्तन पर निर्भर करता है। इस पर कोई तन्त्रिका नियंत्रण नहीं रहता। संकोचनी पेशी (arrector pilorum muscle) का संकुचन त्वग्वसा के निष्कासन में सहायक होता है। त्वग्वसा में वसीय अम्ल तथा कॉलेस्टोरॉल का आधिक्य रहता है, साथ ही इसमें एरगोस्टेरॉल नामक रासायनिक

तत्व भी रहता है, जो सूर्य–प्रकाश या अल्ट्रवायलेट किरणों (ultraviolet rays) के संपर्क में आने से विटामिन 'डी' में परिणत हो जाता है। त्वग्वसा त्वचा एवं बालों को चिकना रखता है तथा उन्हें कोमल एवं चमकीला बनाये रखता है। यह जीवाणुनाशक (bacteriostatic) के रूप में भी कार्य करता है।

त्वग्वसीय ग्रन्थियॉ हथेलियों एवं पॉवों के तलवों के अतिरिक्त शरीर के सभी भागों की त्वचा में पायी जाती हैं। इनका सम्बन्ध बालों की सघनता से रहता है।

शरीर के जिन भागों में बाल अधिक होते है, उनमें इनकी अधिकता रहती है। सीबम के अभाव में बाल और त्वचा शुष्क दिखाई देते हैं, और इसकी अधिकता से त्वचा पर पतली परत जम जाती है, जो बाद में झड़ती रहती है। सिर के बालों में रूसी (dandruff) इसी प्रकार उत्पन्न हो जाती है। बाल्यकाल में त्वग्वसीय ग्रन्थियॉ अपेक्षाकृत कम सक्रिय रहती हैं। ऐसे ही वृद्वावस्था में ये कम सक्रिय हो जाती है, जिससे सीबस का स्रावण कम हो जाता है और त्वचा तथा बाल शुष्क रहते हैं।

त्वचा के उपांग (Appendages of the Skin)

1. बाल या केश (Hair)

बाल (hairs) बह्मा त्वचा के कठोर भाग का ही परिवर्तित (modified) रूप हैं, जो कि डर्मिस में अवस्थित रहते हैं। इनकी रचना नली के समान होती है, परन्तु इनका आकार प्रकार और गठन शारीरिक उपयोगिताओं के अनुरूप रहता है। इनमें भी बह्मा त्वचा की विभिन्न परतों की कोशिकाओं के समान ही तन्त्रिका तन्तुओं (nerve fibres) का अभाव रहता है, परन्तु बाल का सम्बन्ध रक्तवाहिनियों और

तन्त्रिका–तन्तुओं से, रोमकूप तथा जड़ के समीप वाले भाग से होता है, जो अन्तस्त्वचा (डर्मिस) में गहराई तक स्थित रहते हैं। इसलिए बाल का यदि जड़ से खींच कर उखाड़ा जाए, तो पीड़ा का अनुभव होता हैं।

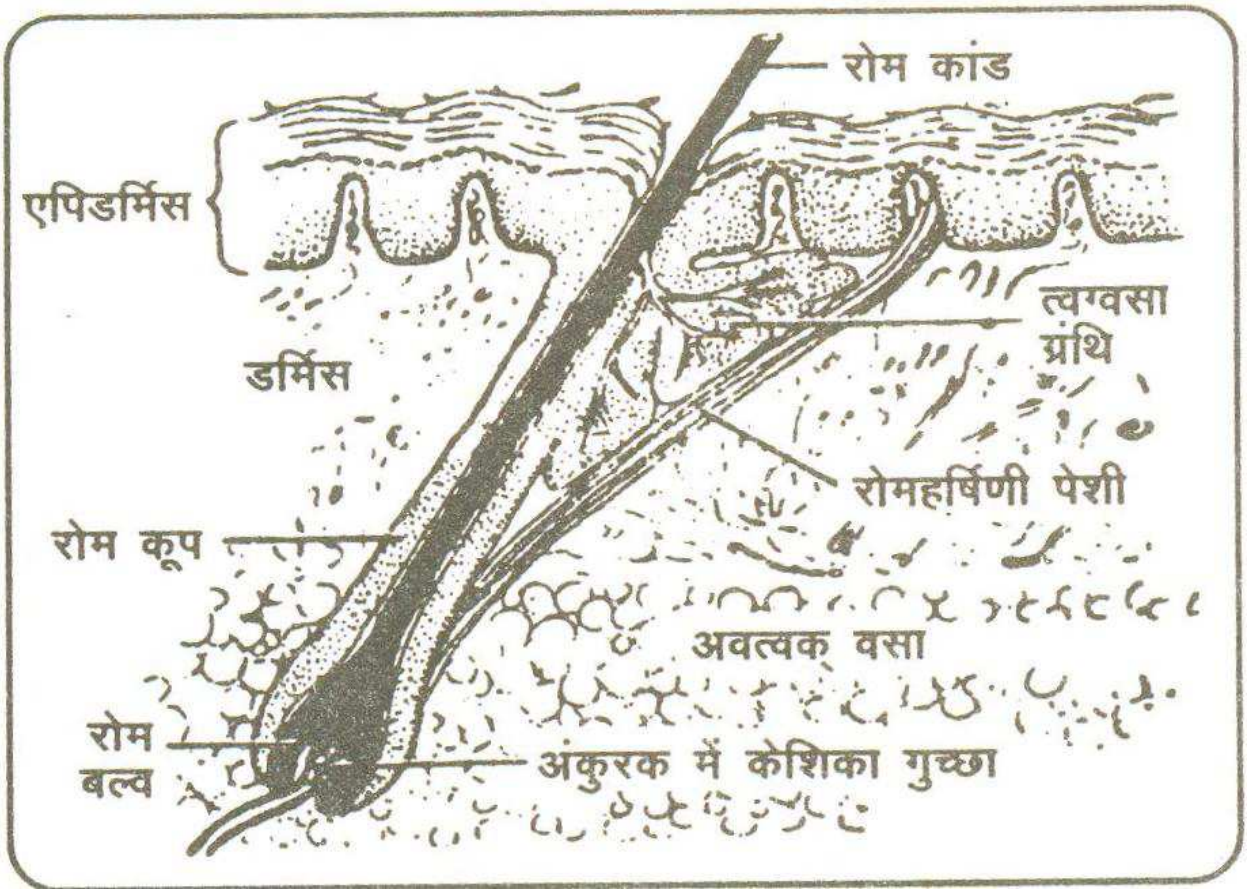

प्रत्येक बाल एक सूक्ष्मकोष–**रोमकूप** (hair follicle) में अवस्थित रहता है। रोमकूप के आधार में कोशिकाओं का एक गुच्छा होता है। जिसे **रोम कन्द** (hair bulb) कहा जाता है। इस हेयर बल्ब की कोशिकाओं में वृद्धि होने से बाल बन जाता है। राम कूप के तल में एक छोटा शंकु–आकार का उभार रहता है, जिसे **अकुरंक** (papilla) कहते हैं, जिसमें रक्त–कोशिकाओं का गुच्छा 'कोशिका अंकुरक' (vascular papilla) रहता है। इनके रक्त से बाल का विकास होता है। बाल के विकास होने में हेयर बल्ब की कोशिकाओं का बहुगुणन होने से जैसे–जैसे

कोशिकाएँ ऊपर को धकेली जाती हैं, तो वे पोषण के स्रोत से दूर होती जाने से मृत हो जाती हैं और केराटिन (keratin) में परिवर्तित जाती है। बाल त्वचा में सदैव तिरछे जमे रहते हैं। छोटी अनैच्छिक पेशी–एरेक्टर पाइलोरम (arrector pilorum) हेयर फॉलिकल्स से जुड़ी रहती हैं। यह हमेशा उसी तरफ रहती है जिधर बाल झुका हुआ रहता है, ताकि जब ये संकुचित हो तब बाल सीधा खड़ा रह सके। उसी समय बाल के आस–पास की त्वचा भी उठ जाती है, जो एक प्रकार का प्रभाव पैदा करती है, जिसे रोगटें खड़ा होना या रोमांचित (goose flesh) होना कहते है।

बाल का त्वचा से बाहर रहने वाला भाग, जो हमे दिखाई देता है, **'रोमकाण्ड'** (hair shaft) तथा शेष त्वचा के भीतर रहने वाला सम्पूर्ण भाग **रोममूल** (hair root) कहलाता है। रोमकाण्ड की सबसे ऊपरी परत **क्यूटिकल** (cuticle) कहलाती है, जो परस्पर व्यापी शल्कों के समान कोशिकाओं (overlapping scale like cells) से बनी होती है। प्रत्येक बाल के अन्दर ही एक **बारीक नलिका** (medulla of the hair) होती है। बाल का मुख्य गात्र अर्थात् **'बाल–प्रांतस्था'** (cortex of the hair) नीचे चौड़ा और ऊपर पतला होता है। बाल की जड़ अर्थात् रोममूल पैपिला पर अवस्थित रहती है और यहीं से बाल को पोषण मिलता है। पैपिला (palilla) के स्वस्थ और सक्रिय रहने पर ही बालों का स्वास्थ्य, उनकी वृद्धि और उत्पत्ति निर्भर करती है।

रोमकूप (hair follicle) में डर्मिस का भाग अतिवाहिकामय रहता है और अन्य स्थानों से अधिक तन्त्रिका–तन्तुओं से प्रेरित रहता है। प्रत्येक बाल से एक त्वग्वसीय ग्रन्थि (sebaceous gland) संबंधित रहती है, जिसमें से सदैव एक

तैलीय द्रव–सीबम, स्रावित होता रहता है, जो बाल तथा त्वचा को चिकना रखता है।

2.नख

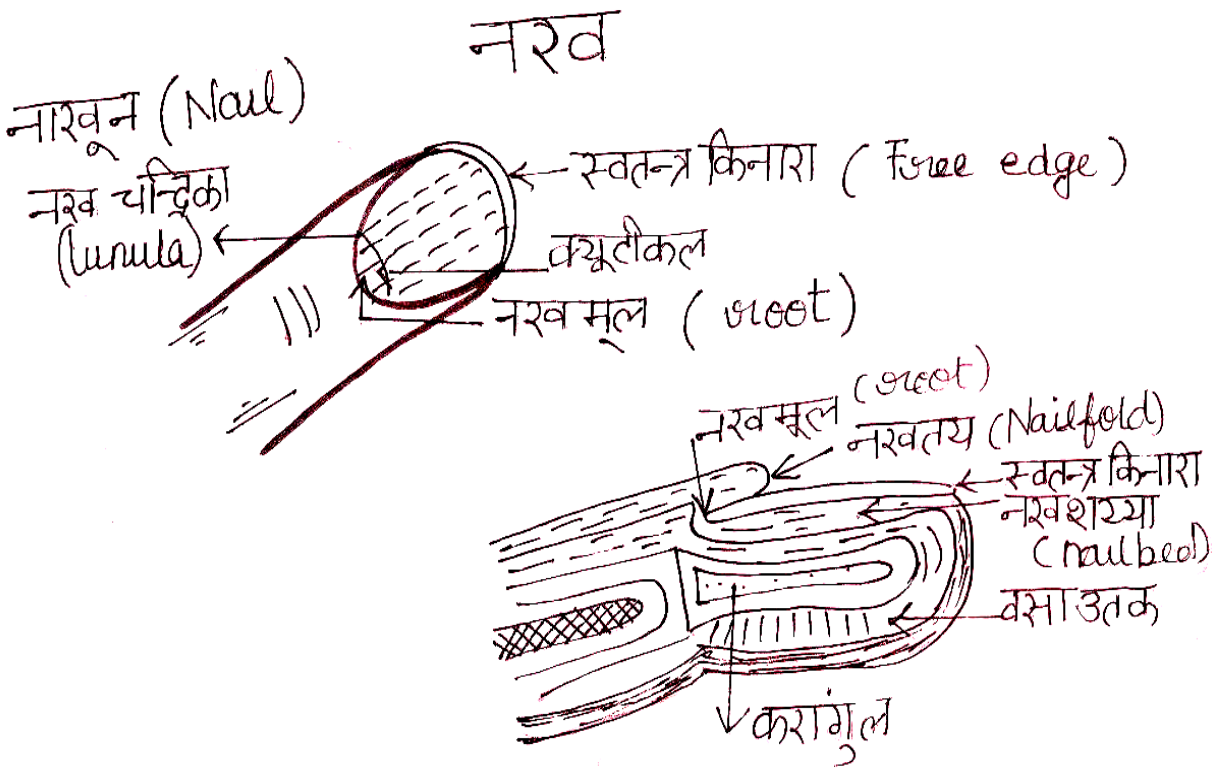

इनका भीतरी हिस्सा त्वचा से लगा रहता है। इनमें उपचर्म की भॉति नालियॉ नहीं होती व इनका पोषण लेसिका के द्वारा होता है। वस्तुतः नख एक प्रकार के उपचर्म है जिनका कोष अधिक सख्त हो गया है। इनका कार्य अंगुलियों को घिसने से बचाना है व सहारा, बल प्रदान करना होता है। कुछ रोगों के लक्षण नख के रंग से प्राप्त है जैसे हृदय रोग में नीले पड़ जाते है पीलिया में पीले होते है। यदि शुद्ध व पर्याप्त मात्रा में हो तो ये लाल व चमकदार होते है। नख परस्पर बढ़ते है व नये बनते है।

नाखून या नख बाह्य त्वचा के आन्तरिक भाग में उत्पन्न होते हैं, तथा उँगलियों के छोर पर स्थित रहते है। ये कठोर, श्रृंगी तथा कुछ वक्र प्लेटे होती है, जो केराटिन युक्त मृत कोशिकाओं की बनी होती है। इनका कार्य उँगलियों की रक्षा करना है।

प्रत्येक नाखून के दो भाग होते है –

1. **पहला सजीव अर्थात नखमूल (Root of nail)**
2. **दूसरा मृत अर्थात नखकाय (Body of nail)**

मृत भाग से नाखून को काटकर अलग किया जा सकता है,जोकि स्वतन्त्र किनारा (Free edge) कहलाता है। नख की मूल (Root) त्वचा में धँसी होती है तथा क्यूटीकिल (Cuticle) से टंकी होती है और इससे अर्द्धचन्द्राकार क्षेत्र बनता है जिसे नख चन्द्रिका (Lunula) कहते हैं। सम्पूर्ण नख के आगे के कुछ भाग के अतिरिक्त पिछला भाग सजीव होता है जो बाह्य त्वचा पर नख शय्या (nail bed) में जमा रहता है। नाखून का दिखाई देने वाला चौड़ा भाग काय (Body) कहलाता है, जो एपीडर्मिस की अंकुरित परत से उत्पन्न होता है, तथा नखशय्या पर स्थित रहता है और त्वचा से संलग्न होता है। नख शय्या (nail bed) में जमा रहता है। नाखून का दिखाई देने वाला चौड़ा भाग काय (Body) कहलाता है, जो epidermis की अंकुरक परत से उत्पन्न होता है तथा नख शय्या पर स्थित रहता है और त्वचा से संलग्न होता है। नख शय्या की त्वचा में रक्त कोशिकाये तथा तन्त्रिका तन्तु विद्यमान रहते हैं। नख की मूल तथा काय का पाशवीय भाग त्वचा की तह (fold) से आच्छादित रहते है। नख वलय (nail fold) कहा जाता है।

त्वचा का आयुर्वेद मतानुसार वर्णन

सम्पूर्ण शरीर को आच्छादित करने वाली त्वचा एक न होकर अनेक बताई गयी है, जैसा कि उत्पत्ति से ज्ञात होता है। इसी कारण इन त्वचाओं का स्वरूप भी भिन्न–भिन्न होते है। स्वरूप एवं कार्य के अनुसार त्वचा के प्रकारों को भी विभिन्न नामों से सम्बोधित किया गया है। साथ ही इसका परिमाण (मोटाई) भी एक न होकर पृथक–पृथक है। जिनका वर्णन विभिन्न मतानुसार आगे दिया जा रहा है–

महर्षि चरकानुसार – महर्षि अग्निवेश द्वारा शारीरावयवों का प्रश्न पूछे जाने पर आत्रेय जी ने सम्पूर्ण शरीर को ढकने वाली एवं प्रथम में दृष्टिगोचर होने वाली त्वचाओं का वर्णन करते हुये कहा है कि 'शरीरषट् त्वचः' शरीर में छह त्वचाये होती है। इनमें सभी त्वचाओं का नामोल्लेख न करके संख्या का ही निदेश किया है। इनमें प्रथम एवं द्वितीय को उदकधारा तथा असृग्धरा बता कर शेष को तीसरी, चौथी, पांचवी एवं छठी ही कहा गया है।

प्रथम बाहरी त्वचा उदकधरा है जो जल को धारण करती है।

दूसरी असृग्धरा है जो रक्त को धारण करने वाली है।

तीसरी सिध्म एवं किलास नामक कुष्ठ का स्थान है।

चौथी सभी प्रकार के दद्रु एवं कुष्ठों का उत्पत्ति स्थान है।

पांचवी में अलजी एवं विद्धधि की उत्पत्ति होती है।

छठी अन्तिम त्वचा है जिसमें अनेक प्रकार के व्रण उत्पन्न होते है।

महर्षि सुश्रुत के अनुसार त्वचा 7 प्रकार की होती है, जो निम्न प्रकार है –

अवभासिनी – प्रथम त्वचा का नाम अवभासिनी है। यह सभी प्रकार के वर्णो को प्रकट करती है। यह परिणाम में चावल के 18 वें भाग के बराबर मोटी होती है। इसी त्वचा में सिध्म (Pityriasis versicolor) तथा पदम् कण्टक (Papliloma of the skin or pigmented Nevi) नामक रोग होते है।

लोहिता – द्वितीय लोहिता नामक त्वचा है। इसकी मोटाई चावल के 16 वें भाग के बराबर होती है। इसी त्वचा में तिलकालक (Pigmented Nevi) नयच्छ एवं व्यंग रोग होते हैं। शरीर पर छोटा या बड़ा, काले या लाल रंग का वेदना रहित मण्डल (चकत्ता) नयच्छ कहलाता है। क्रोध एवं परिश्रम से कुपित वायु पित्त से मिलकर मुख की त्वचा में मण्डल की उत्पत्ति करती है उसे व्यंग या झाई कहते हैं।

श्वेता – तीसरी त्वचा को श्वेता कहा जाता है। यह चावल के बाहरवे भाग के बराबर परिणाम में मोटी होती है। यह त्वचा चर्मदल, अजगल्ली (Davier's disease) एवं मशक (Moles) का अधिष्ठान है। प्रायः देखा जाता है कि किसी वस्तु की खरोच लग जाने पर उतरने वाली त्वचा के नीचे कुछ क्षण तक श्वेत भाग दिखाई देता है इसी को श्वेता कहा जाता है।

ताम्रा – चौथी ताम्रा नामक त्वचा है। यह चावल के आठवें भाग के परिणाम के बराबर होती है। यह अनेक प्रकार के किलास (Blastomycosis) एवं कुष्ठों

की अधिष्ठात्री भी है। रक्तवाहिनियों द्वारा रक्त का संवहन इसी त्वचा से माना जाता है। इसका वर्ण ताम्र के समान होता है। इसलिये महर्षि सुश्रुत ने इसे ताम्रा कहा है।

वेदिनी – पांचवी त्वचा वेदिनी है। यह ब्रीहि (चावल) के पांचवे भाग के बराबर मोटी होती है। इसमें कुष्ठ एवं विसर्प का आश्रय है। इसके द्वारा स्पर्श व वेदना का ज्ञान होता है। इसमें कई संज्ञावाही व ज्ञानवाही नाड़ियां संवहन करती है। इसी से उष्ण शीत की अनुभूति होती है।

रोहिणी – छठी रोहिणी नामक त्वचा है। यह ब्रीहि (चावल) के बराबर मोटी है। इस त्वचा में ग्रन्थि, अपची अबुर्द (Tumour) श्लीपद (Elephantiasis) गलगण्ड आदि रोग होते है। इस पर रोह प्ररोह पैदा होते है।

मांसधारा – सांतवी एवं अन्तिम त्वचा जो मांस पेशियों से संलग्न होती है, मांसधरा कहलाती है। इसका परिमाण दो ब्रीहि के बराबर होता है। इस त्वचा में ततद् स्थानों में भगन्दर (fistula in ano) विद्रधि (Abscess) एवं अर्श (Piles) रोग होते हैं। आधुनिक विचारधारा में यही (Dermis) नामक त्वचा हैं।

त्वचा के कार्य (Functions of the Skin)

शरीर में त्वचा के निम्नलिखित कार्य होते हैंः–

रक्षात्मक (Protective)

शरीर के तापक्रम का नियमन (Temperature regulation)

3. उत्सर्जन (Excretion)

4. सामान्य संवेदन (General sensation)
5. स्राव उत्पादन (Secretion)
6. जल–सन्तुलन (Water balance)
7. अम्ल–क्षार सन्तुलन (Acid-base balance)
8. संश्लेषण (Synthesis)
9. संचयन (Storage)
10. अवशोषण (Absorption)

1. रक्षात्मक कार्य (Protective)

त्वचा शरीर का रक्षात्मक बाह्य आवरण हैं, जो कि शरीर के कोमल अंगो, मॉसपेशियों, रक्तवाहिनियों आदि के लिए रक्षात्मक भित्ति का काम करती है। यह बाहरी चोट आदि से शारीरिक अंगों की रक्षा करती है। अनिष्टकर सूक्ष्म जीवाणु एवं बाह्य पदार्थो के शरीर में प्रवेश करने के प्रति अवरोधक की भॉति कार्य करती है। त्वचा जल–अभेद्य (water proof) होती है। अतः यह बाहर के तरल द्रवों को भीतर नहीं जाने देती तथा ऊतकों के तरलों को बाहर नहीं निकलने देती है। त्वचा शरीर को रोगों से बचाने में भी सक्रिय भूमिका अदा करती है।

2. शरीर के तापक्रम का नियमन (Temperature regulation)

त्वचा यद्यपि पूर्णतः वाटर–प्रूफ है, फिर भी उसकी बाह्य सतह, स्वेद ग्रन्थियों की सूक्ष्म नलियों के द्वारा स्रावित द्रव से नम रहती हैं। स्वेद या पसीना इन सूक्ष्म नलियों के सतही छिद्रों (pores) से उत्सर्जित होता है तथा वातावरणीय प्रभाव से इसका निरन्तर वाष्पीकरण होता रहता है, जिससे शरीर में शीतल प्रभाव बना रहता

है। आर्द्र (humid) मौसम में शरीर सहज ही शीतल नहीं हो पाता है क्योंकि बाहर की हवा प्रायः जल से संतृप्त होती है तथा पसीना वाष्पीकृत होने के बजाय त्वचा पर बना रहता है। ठण्डे मौसम में त्वचा इन्सूलेटर की भॉति कार्य करती है, जिससे शरीर में ऊष्मा (heat) बनी रहती है और शरीर गर्म बना रहता है। इसके अतिरिक्त, डर्मिस में रक्तवाहिकाओं का घना जाल विद्यमान रहता है। गर्म मौसम में वाहिकाएँ विस्फारित हो जाती हैं, इस तरह शरीर की ऊष्मा का ह्रास होता है।

3. उत्सर्जन (Excretion)

त्वचा स्वेद यानि पसीने के माध्यम से व्यर्थ पदार्थो जैसे यूरिया आदि की कुछ मात्रा उत्सर्जित करती हे। त्वचा हर घन्टे की दर से लगभग एक ग्रम व्यर्थ नाइट्रोजन को भी निकालती है।

4. सामान्य संवेदन (General sensation)

त्वचा स्पर्श, दबाव, वेदना, शीत तथा ताप की संवेदनाओं को ग्रहण करके मस्तिष्क में भेजती है। ये कार्य त्वचा में विद्यमान तन्त्रिका तन्तुओं के अंन्तागों (nerve endings) के द्वारा सम्पादित होते हैं। तन्त्रिका तन्तुओं से निर्मित 'स्पर्श कणिकाएँ' (tactile corpuscles) ही स्पर्शेन्द्रिय का कार्य करती हैं। चूकि बालों की जड़ों में भी तन्त्रिका तन्तुओं की अधिकता रहती है अतः बाल भी त्वचा की संवेदन क्रिया में सहायता प्रदान करते है।

5. स्राव उत्पादन (Secretion)

त्वचा में विद्यमान त्वग्वसीय ग्रन्थियों से त्वग्वसा (sebum) की उत्पत्ति होती है। इस स्राव में वसीय अम्ल, कॉलेस्टेरॉल तथा अर्गोस्टेरॉल मुख्य रूप से रहते हैं।

इससे त्वचा को स्नेहन होता रहता है जिससे त्वचा चिकनी बनी रहती है। शीतऋतु में इस स्राव के कम हो जाने पर त्वचा शुष्क एवं शल्की हो जाती है।

त्वग्वसीय ग्रन्थियों के रूपान्तरित रूप स्तन ग्रन्थियों से भी एक विशेष स्राव उत्पन्न होता है जो संक्रमणों से सुरक्षा करता है।

6. जल–सन्तुलन (Water balance)

स्वेद अर्थात् पसीने का निर्माण तथा उसका वाष्पीकरण शरीर के भीतर जल सन्तुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण तत्व है।

7. अम्ल–क्षार सन्तुलन (Acid-base balance)

स्वेद की अभिक्रिया एसिडिक होती है, अतः इसके साथ–साथ पर्याप्त मात्रा में शरीर से अनावश्यक एसिड निष्कासित हो जाते हैं। अम्लरक्तता यानि एसीडोसिस (acidosis) की अवस्था में स्वेद और अधिक एसिडिक होकर शरीर के एसिड के निष्कासन को और भी बढ़ा देता है। इस प्रकार त्वचा के द्वारा शरीर के भीतर की समसमान प्रतिक्रिया (constant reaction in the body) को बनाए रखने में सहायता मिलती है।

8. संश्लेषण (Synthesis)

त्वचा की त्वग्वसीय ग्रन्थियों में निर्मित त्वग्वसा (सीबम) में एर्गोस्टोरॉल (Ergosterol) विद्यमान रहता है, जिससे सूर्य की अल्ट्रावॉयोलेट किरणों की क्रियाओं द्वारा विटामिन 'डी' का निर्माण होता है, जो शरीर के कई कार्यो को संपादित करता है तथा स्वास्थ्य के लिए अति महत्वपूर्ण होता है।

9. संचयन (Storage)

डर्मिस एवं अवत्वचीय ऊतक (Subcutaneous tissue) वसा, जल, लवण तथा ग्लूकोज एवं अन्य पदार्थो का संचयन करते है।

10. अवशोषण (Absorption)

त्वचा में तैलीय पदार्थो को अवशोषित करने की क्षमता रहती है। यह लिपिड्स एवं विटामिन्स को सहज ही शोषित कर लेती है।

त्वचा शरीर का सबसे बड़ा अंग है जो कि बाहरी अंग है। जो कि बाहरी त्वचा हमें अत्यधिक गर्म शर्द तथा शुष्क वातावरणीय प्रभाव से बचाती है। और यदि कुछ वातावरणीय प्रभाव त्वचा को भेदकर शरीर के अन्दर पंहुच जाय तो यह विभिन्न प्रकार के रोगों का कारण भी बन सकते हैं। इस लिये त्वचा का सीधा सर्म्पक इम्यून तन्त्र से भी होता है। यदि त्वचा स्वच्छ तैलीय एवं मजबूत होगी इसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अधिक होगी। और यदि त्वचा ,शुष्क, अत्यधिक तैलीय होगी इसमे वातावरणीय प्रभावों को रोकने की क्षमता उतनी कम होगी। रोजाना तैल मसाज करने से त्वचा मजबूत सुन्दर एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता वाली होती है। त्वचा को सुन्दर एवं मजबूत बनाने के लिए आयुर्वेद में पंचकर्म के अन्तर्गत स्नेहन एवं स्वेदन कर्मों का उल्लेख किया गया है। अतः त्वचा की देखभाल न केवल सौन्दर्य की दृष्टि से अधिक आवश्यक है बल्कि शरीर की रोगप्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के उद्देश्य से भी महत्वपूर्ण है।

अभ्यास

प्रश्न 1. आयुर्वेद एवं आधुनिक मत के अनुसार त्वचा की विभिन्न कलाओं के नाम का उल्लेख करें।

प्रश्न 2. बाह्य त्वचा (Epidermis) की विभिन्न परतों के नाम का उल्लेख करें।

प्रश्न 3. अन्तस्त्वचा (Dermis) में स्थित अंगकों के नाम का उल्लेख करें।

प्रश्न 4. त्वचा के उपांगों का नाम लिखे।

प्रश्न 5. नख का चित्र बनाते हुए नख का विस्तृत वर्णन करें।

प्रश्न 6. आयुर्वेद मत के अनुसार त्वचा का वर्णन करें।

प्रश्न 7. त्वचा के कार्यों का विस्तृत वर्णन करें।

इकाई – 2

विभिन्न त्वचा संबंधित रोग

उद्देश्य – सभी त्वचागत रोग सौन्दर्य को प्रभावित करते है, सौन्दर्य वर्धन हेतु विभिन्न क्रियाएँ, लेप, अभ्यंग इत्यादि के साथ विद्यार्थियों को उन रोगों के आयुर्वेद एवं आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में प्रचलित नाम तथा उनकी चिकित्सा का ज्ञान आवश्यक है, जिससे विद्यार्थी उचित समय पर निर्णय ले सके की क्या उन रोगों को साधारण उपायों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है अथवा इनमें त्वचा विशेषज्ञों के विशेष परामर्श की आवश्यकता है।

हर सौन्दर्य विशेषज्ञ को त्वचा रोगों की चिकित्सा में सहायक होना आवश्यक है। इस इकाई द्वारा विद्यार्थी निम्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकेगे।

त्वचा गत रोग

- आयुर्वेद मतानुसार वात, पित्त, कफ, दोष से युक्त त्वचागत रोगों के लक्षण एवं उनकी सामान्य चिकित्सा
- त्वचा पर कर्म करने वाले कुछ आयुर्वेदिक द्रव्यों के नाम
- आयुर्वेद एवं आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में क्षुद्र रोगों का तुलनात्मक उल्लेख
- सौन्दर्य को प्रभावित करने वाले त्वचा के कुछ रोगों का परिचय एवं चिकित्सा
- त्वचा को स्वस्थ रखने हेतु सामान्य उपाय

आयुर्वेद मतानुसार वात, पित्त, कफ, दोष से युक्त त्वचागत रोगों के लक्षण एवं उनकी सामान्य चिकित्सा

आयुर्वेद मतानुसार वात, पित्त, कफ, दोष से युक्त त्वचागत रोग निम्न लक्षण युक्त होते है, उनकी सामान्य चिकित्सा का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है –

वातिक – त्वचा रूक्ष तथा क्षोभयुक्त होती है रूक्ष वायु द्वारा इन लक्षणों की वृद्धि हो जाती है।

चिकित्सा – रोगी को वातशामक द्रव्यों का सेवन करना चाहिए, वात नाशक द्रव्यों से युक्त तिल तैल का प्रयोग हितकर है। भोजन वात शामक हो तथा रहने का स्थान अधिक ठंडा व हवादार न हो। त्रिफला से कोष्ठ साफ करें तथा वस्ति का प्रयोग तथा वात नाशक द्रव्यों से अवगाहन कराए।

पैत्तिक – त्वचा लालिमा युक्त, तथा उष्ण होती है सूर्य की गर्मी से ये लक्षण वृद्धि को प्राप्त होते है।

चिकित्सा – पित्त नाशक आहार–विहार का सेवन लाल फल, खट्टे तीखे व्यंजनों से परहेज कराये, नारियल पानी का प्रयोग हितकर है, सूर्य की किरणें तथा गर्म स्थान पित्तज त्वचा रोगों की वृद्धि करते हैं, अलूई जेल (Gel), सूरजनमुखी का तेल, बाह्मी, भृंगराज से युक्त तेल, शीत प्रदान कर पित्त का शमन करते है।

कफज – त्वचा कण्डू सूजन व उभार युक्त होती है। आद्रता तथा ठण्डा प्रदेश कफज व्याधि की वृद्धि करता है।

चिकित्सा – इसमें कफ नाशक आहार–विहार का सेवन त्वचा पर रूक्ष चूर्ण का प्रयोग लाभकारी है। मूत्रजनन औषधि जैसे गोक्षुर शोथ को घटाता है। चूर्ण के रूप में सरसों तथा शुण्ठी का प्रयोग कर सकते है।

त्वचा पर कर्म करने वाले कुछ आयुर्वेदिक द्रव्यों के नाम

- स्वेद जनन – वत्सनाभ आदि
- स्वेदोपग – शोभाज्जन आदि
- स्वेदापनयन – उशीर आदि

- रोमसज्जनन – हस्तिदन्त आदि
- रोमशातन – क्षार आदि
- केश्य – नारिकेल, तिल, भृंगराज नीलनी आदि
- विदाही – राजिका इत्यादि
- स्नेहन – घृत आदि
- स्नेहोपग – मृद्वीका, श्लेष्मात्मक, इसबगोल आदि
- रूक्षण – यव इत्यादि
- वर्ण्य – केशर, केतकी
- कण्डूघ्न – करंज, निम्ब, सर्षण, जयन्ती, अरण्यजीरक, जलनिम्ब आदि
- कुष्ठघ्न – खदिर, हरिद्रा, भल्लातक, आरग्वध, जाती, तुवरक, बाकुची, मदयन्तिका, काकोदुम्बर, सैरेयक, चक्रमर्द, यूथिकपर्णी आदि
- उदर्दप्रशमन – तिन्दुक, प्रियाल आदि

त्वचा संबंधी रोग

त्वचा के सामान्य परिचय के उपरान्त विद्यार्थी त्वचा संबंधित क्षुद्र रोगों के नाम तथा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान से उनकी यथासम्भव तुलना का परिचय प्राप्त करेंगे।

सौन्दर्य को प्रभावित करने वाले त्वचा के कुछ रोगों का परिचय एवं चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

- अजगल्लिका– can be compared with subcutaneous lymphnodes
- अन्थालजी – can be compared with loalised lymph adenitis.

  विवृता – can be compared with (follicular papule)
- कच्छपिका –can be compared with a group of infected lymph nodes
- वल्मीक – it can be compared with piling of dried secreations of sebaceous glands.
- इन्द्रवृद्धा कमल की कर्णिका के आकार की छोटी–छोटी पिड़िकाओं से घिरी हुई पिड़िका है। it can be compared with collection of small pimples which usually appear after fever on the angle of mouth these are the collection of siborrheic pimples.
- पनसिका –it can be compared with best over bone or place where there is very less subcutaneous tissues.
- पाषाणगर्दभ – it seems to be a condition of enlarged parotid gland.जालगर्दभ –it can be compared with cellutites or erysipelas
- कक्षा –this is cellutitis of axilla
- विस्फोटक –it can be compared with vesicular on bullous erruption

- अग्निरोहिणी –it can be taken as big acute abscess of axilla which may accompany with local blisters and fever.
- चिप्प –It can be campared with whitlow. inflammation of terminal pulp space.
- कुनरव –this can be considered as haemorrhage under the nail its clot turns into black colour.
- अतुशयी –It can be compared with deep seated abscess of sole or palm.
- विदारिका –can be compared with infected enlarged lymph gland
- शर्कराबुद –this description is similar to that of the signs of sebaceous born (cocks peculiar tumour).
- पामा– यह Scabies के लक्षण वाला त्वचा रोग है।
- विचर्चिका –it can be considered under dry and wet eczemas.
- रकसा –its signs and symptoms look like that of the prickly heat.
- पददारी (विपादिका) –its sighns and symptoms look like that of cracked heels.
- कदर –it can be considered with callosity which forms due to hyper keratosis

- अलभ –it look like chilblain (Erythena pernio) in which there is redness itching and swelling.

- खालित्य –this may be termed as Alopecia areata’ Alopecia simple and Alopecia universalis successively.
- दारूणक –it may be compared with 1- Dandruff Ptyriasis capitis 2- Seborrheic dermatitis
- अरूंषिका –can be compared with Eczema of face and scalp and impetigo contagiosa of the head.
- पलित –can be compared with grey hair
- मसूरिका –can be compared with Small Pox
- मुखदूषिका –can be compared with Acne Vulgaris.
- पद्मिनी कण्टक –can be compared with Papilloma of the skin.
- जतुमणि– यह अनुवांशिक व्याधी है it can be compared with mole
- मषक– यह वेदना रहित, स्थिर एवं उड़द की तरह काले वर्ण के तिल के समान होत हैं। can be compared with wart.
- तिलकालक –it is non elevated mole formed from the pigrmented material or the pigmented cells called (Melanoma)
- व्यंग़ –can be compared with chloasma or symmetrical patches of diffuse brown pigmentation of the midfore head and cheeks.

- नयच्छ– या लान्छन बड़ा छोटा या काला श्वेत वर्ण का जन्म से उत्पन्न चिन्ह नयच्छ कहलाता है।
- निलिका– व्यंग के समान लक्षणों वाले किन्तु वर्ण में काले एवं मुख के अतिरिक्त अन्य स्थान पर उत्पन्न मण्डल– may be compared with discolouration of the skin other than face as a result of many disease like typhoid, malaria, rheumatoid arthrrtis cirrhosis of liver etc.
- परिवर्तिका –can be compared with paraphymosis some others are अवपातिका

सौन्दर्य को प्रभावित करने वाले त्वचा के कुछ छुद्र रोगों का परिचय एवं चिकित्सा

यद्यपि त्वचा में उत्पन्न होने वाले सभी रोग सौन्दर्य को प्रभावित करते हैं तथा सभी प्रकार के त्वक रोगों की अभीष्ट चिकित्सा त्वचा विशेषज्ञ के परामर्श से समय पर की जानी चाहिए तथापि त्वचा के कुछ ऐसे रोग हैं जिनका उचचार साधारण तरीकों से भी सम्भव है। सौन्दर्य प्रसादन कर्मी के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह त्वचा में सहायक बन सके। त्वचा में उत्पन्न होने वाले कुछ छुद्र रोगों को यथासम्भव उनके अंगरेजी नाम के साथ नीचे वर्णित किया गया है। जो साधारण एवं सरल उपायें से नियंत्रित हो सकते हैं :–

1. अजगल्लिका : – त्वचा क वर्ण वालीए स्निग्ध, पीड़ारहित, मूत्र के प्रमाण की, कफ और वात से उत्पन्न होने वाली बालकों की पीड़िका को अजगाल्लिका कहते हैं।

चिकित्सा – सज्जीखार एवं यवक्षार को मिलाकर नीम के जल में लेप बनाकर पीड़िका पर बार–बार लेप करने से वह ठीक हो जाती है।

2. विवृता – पके हुए गूलर फल के समान वर्ण वाली, गोल पीड़िका होती है, इस पीड़िका का मुख चौड़ा होता है तथा पीड़िका के चारों ओर शोफ (inflammation) के कारण एक मण्डल सा बन जाता हैए पीड़िका में से पूय तो निकल चुका होता है पर शोफ के कारण रोगी को दाह एवं शूल होता है।

चिकित्सा – श्वेत चंदन, मुलेठी चूर्ण, मैजीठ चूर्ण एवं गेरू (गैरिक) को उबले हुए दूध में मिलाकर लेप बनाकर, पहिए विवृता पीड़िका को नीमजल अथवा अन्य एण्टीसेप्टिक घोल से साफ कर फिर उक्त लेप को तब तक लगाना चाहिए जबतक पीड़िका ठीक न हो जाय। यदि 5 दिनों में ठीक न हो तो चिकित्सकीय परामर्श अवश्य लेना चाहिए।

3. कच्छपिका – इसे कच्छपी भी कहते हैं। यह भी एक प्रकार की बड़ी पीड़िका है जिसमें एक से अधिक मुख होते हैं। कच्छप की पीठ के समान आकार वाली अधिक (चाय या पांच) मुखों वाली शूल एवं दाह युक्त पीड़िका को कच्छपिका (carbuncle) कहते हैं। यह कफ और वायु के प्रकोप से उत्पन्न होती है।

चिकित्सा – सर्वप्रथम रोगी के रक्त की षर्करा की परीक्षा (Blood sugar estimation) का परामर्श देना चाहिए यदि रोगी की रक्त शर्करा सामान्य हो तभी चिकित्सा उपाय करने चाहिए। रोगी को विद्रधि स्थान पर प्रथम स्वेदन कर्म करना चाहिए। उसके पश्चात् मैनसिल, हस्ताल कूठ और देवदारू के कल्क का लेप उस

स्थान पर दिन में एक बार (शीत ऋतु में) तथा दो बार (ग्रीष्म ऋतु में) करना चाहिए। लेप लगाने तथा स्वेदन से पूर्व व्रण स्थान का शोधन कर लेना चाहिए। यह चिकित्सा बहुत छोटे आकार की कच्छपिका पर ही करनी चाहिए यदि कच्छपिका बड़ी हो तो रोगी को चिकित्सा के पास भेज दें।

4. पनसिका – कफ और वायु से उत्पन्न होने वाली पीड़िका है। यह दोनों कानों पर, कानों के चारों ओर, अथवा पीठ पर उत्पन्न होता है।

चिकित्सा – सर्वप्रथम पीड़िकाओं में स्वेदन कर्म करना चाहिए, इसके पश्चात् मैनशिल, हरिताल, कूठ और देवदारू के कल्क का लेप लगाना चाहिए। पीड़िकाओं से पूय के निकल जाने पर उन्हें नीम जल से शोधित कर जात्यादि तैल अथवा कासीसादि तैल युक्त पट्टिकायें विकृति स्थल पर लगानी चाहिए।

5. चिप्प – यह वात और पित्त से उत्पन्न होने वाली व्याधि है। नख के पीछे के भाग में दोष एकत्र होकर नखमांस (Nail matrix) में पाक उत्पन्न होता है रोगी को तीव्र शूल एवं दाह होता है इस रोग को चिप्प (Paronychi) कहते हैं।

चिकित्सा – चिप्प रोग से प्रभावित नख युक्त अंगुलि में तब तक मेग्नीशियम सल्फेट (Mag. sulfate) युक्त उष्ण जल से सेक करना चाहिए जब तक कि पूय बाहर नहीं निकल जाय सकें सुबह तथा शाम दोबारा किया जाना चाहिए।

6. कुनख – चोट लगने से नख प्रदुष्ट होकर काला, रूक्ष और कठिन हो जाता है इस प्रकार की विकृति का कुनख (onychogryphosis) कहते हैं। इसे कुलीन भी कहते हैं।

चिकित्सा – चोट लगने से कुरूप काले एवं खुरदरे हुए नख को नमक युक्त गरम जल के घोल में बार–बार सेक करना चाहिए। जब विकृत हुआ नख निकलकर नया नख प्रकट हो जाये तो जात्यादि तैल में मुलेठी चूर्ण मिलाकर पट्टी बॉधनी चाहिए।

सुन्दर नख सौन्दर्य में निखार लाते हैं अतः नखों की समुचित देखभाल की जानी चाहिए। स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य दोनों को ध्यान में रखते हुए नखों को अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिए तथा नियमित रूप से हाथ एवं पांव के नखों की सफाई एक अत्यन्त मुलायम ब्रश द्वारा की जानी चाहिए, चिप्प एवं कुनख व्याधियों का कारण नखों में गंदगी होना तथा नखों को बढ़ाया जाना है। अतः नियमित रूप से नखों की कटाई एवं सफाई की जानी चाहिए।

7. पाददारी – अत्यधिक चलने से तथा शरीर में कैल्सियम की न्यूवता होने से पांवों के तलवों के किनारे विदीर्ण (फट) हो जाते हैं। वात प्रकोप से उत्पन्न होने वाले इस रोग को पाददारी (विवाई) कहते हैं। दरारें जब तक त्वचा में ही स्थित होती है तो कुरूपता दिखती है किन्तु इनके गहरी धातुओं तक पहुॅचने पर शूल एवं रक्त स्राव होने लगता है। अधिक चलने में यदि रोगी नंगे पांव चलना है अथवा ऐसे जूते पहनकर चलता है जिसमें पांव खुले रहते हैं तथा मार्ग की कंकड़ धूल पांव के तलों पर आघात करती है।

चिकित्सा –

- पाददारी से पीड़ित रोगी को नंगे पांव नहीं चलना चाहिए।
- रोगी को सूती जुराब पहनकर जूते पहिनने चाहिए यथासम्भव कपड़े के बने जूते पहिनने चाहिए।
- रात्रि के समय रोगी गुनगुने जल में रीठे का चूर्ण अथवा नींबू का इस प्र्याप्त मात्रा में मिलाकर कम से कम 15 मिनट तक पावों को उस पानी में डुबोये रखे, उसके बाद पावों को साफ गुनगुने पानी से धोकर सूती कपड़े से भलीभांति पौंछले। पावों के सूखने पर दरारों में पिण्डतैल भलीभांति लगकर स्वच्छ सूती कपड़ा बाहर से लपेट ले अथवा स्वच्छ सूती जुराब पहनलें।

- रोगी को पर्याप्त मात्रा में कैल्सियम जीवनीय बी (vitamin B complex) एवं जीवनीय सी (vitamin C) युक्त खाद्य यथा दूध, पपीता, आंवला, नींबू, अमरूद पर्याप्त मात्रा में खाना चाहिए। लगभग 15 दिनों में पाददारी ठीक हो जाती है।
- मोम 6 ग्राम को 40 ग्राम तिल के तेल में पकाकर 10 ग्राम राल पीसकर डाल दें, थोड़ी देर बाद जब पक जाये तब उतार लें, यह मरहम भी बिबाइयों के लिए अक्सीर हैं।
- विशुद्ध ऐरण्ड तेल में ऐरण्ड की गिरी को डालकर खरल में खूब घोटकर गाढ़ा–गाढ़ा लेप जैसा तैयार करें। अब एक स्वच्छ छुरी से इस लेप को फटी दरारों (बिबाई) में भरें। जब तक पूर्ण लाभ न हो प्रयोग चालू रखें।

8. अलस – निरंतर अधिक समय तक पानी में रहने अथवा पानी वाली जगहों पर काम करने से पानी एवं कीचड़ पांव की अंगुलियों के मध्य में जमा होकर अंगुलियों के मध्य की त्वचा में सड़न पैदा कर देता है। रोगी को दाह (जलन) एवं कण्डु (खुजली) होती है तथा अंगुलियों के मध्य में क्लेद (सड़ी अथवा गली त्वचा) एकत्र हो जाता है। इस व्याधि को अलस (chilblain) कहते हैं।

चिकित्सा – रोगी को पैरों को नीम के जल से धोना चाहिए तथा धोने के पश्चात् रात्रि में स्वच्छ सूती कपड़े से विकृत भाग को शुष्क (सूखा) बनाकर उन स्थानों पर नीम पत्रचूर्ण + कासीस एवं मैनसिल चूर्ण दोनों को मिलाकर पर्याप्त मात्रा में छिड़क देना चाहिए। प्रात काल पुनः नीमजल से धोकर पूर्णतया शुष्क बनाकर निम्न तैल अथवा कण्टकारी रस से सिद्ध सरसों का तैल का लेपन करना चाहिए।

9. पामा – जिस रोग में रोगी के वाहय जननागों पावों हाथों हाथ की अंगुलियों तथा गात्र में जलीय स्राव एवं कण्डुयुक्त छोटी–छोटी पीड़िकायें उत्पन्न होती हैं उसे

पामा या कच्छ (scabies) कहते हैं। तीव्र कण्डु (खुजली) होना रोग का मुख्य लक्षण है तथा यह फैलाने वाला रोग है।

कच्छ (scabies) दो तरह की होती है –

सूखी खुजली (Dry scabies)

गीली खुजली (Moist scabies)

चिकित्सा –

- पामा चिकित्सा का महत्वपूर्ण भाग यह है कि घर के सदस्यों अथवा एक साथ रह रहे छात्र आदि सदस्यों सभी का उपचार एक साथ किया जाना आवश्यक है।
- रोगी के अंतः वस्त्र एवं विस्तरे की बिछाने तथा ओढ़ने की चादरें यातो तेज धूप में सुखाई जानी चाहिए अथवा पानी में दस मिनट तक उबाल कर सुखाई जानी चाहिए।
- रोगी को प्रतिदिन नीम के पत्रों को कूटकर तथा उन्हें पानी में उबालकर उस पानी से स्नान करना चाहिए अथवा गो मूत्र से स्नान करना चाहिए तथा स्नान के बाद नंगे शरीर कुछ समय धूप में बैठना चाहिए।
- रोगी को औषधि के रूप में षु0 गंधक 250 मि0ग्रा0 + स्वर्ण गैरिक (गेरू) 250 मिग्रा को दिन में दो बार दूध के साथ तथा निम्वादि चूर्ण 2 ग्रा0 दो बार जल के साथ दिया जाना चाहिए। यह मात्रा वयस्क की है।

10. दारूणक – कफ और वायु के प्रकोप से जब बालों का स्थान (त्वचा) कठोर, रूखा एवं कण्डुयुक्त हो जाता है, कभी–कभी त्वचा फटी सी हो जाती है तथा त्वचा से सूखी भूसी के समान परतें टूटकर गिरती है तो इस रोग को दारूणक (Dandruff) कहते हैं।

चिकित्सा – कोदो धान (मंडुवा) के क्षार या राख को जल में घोलकर उस घोल से शिर को धोना चाहिए निरंतर तीन दिनों तक उक्त घोल से शिर धोकर चौथे दिन खट्टी छांच्छ से शिर धोना चाहिए तथा पांचवे दिन से पुनः कोदो धान राख से शिर धोकर किंशुक पत्रादि तैल से शिर पर अभ्यंग करना चाहिए। छांछ के स्थान पर आंवला चूर्ण के घोल से भी शिर को धो सकते हैं। लगभग तीन सप्ताह तक उक्त क्रम चलाने से दारूणक समाप्त हो जाता है तथा बाल भी चमकदार हो जाते हैं। किंशुक पत्रादि तैल के स्थान पर नारियल तैल में बने आंवला तैल का प्रयोग किया जा सकता है।

11.पालित्य – पालित्य या पलित रोग अधिक क्रोध, शोक, एवं श्रमाधिक्य से शरीर का पित्त बालों को पकाकर श्वेत कर देता है इसे पालित्य कहते है।

चिकित्सा – नीली तैल (सुश्रुत चिकित्सा स्थान 25/28–31) पलित रोग के लिए श्रेष्ठ उपाय है। इसके अतिरिक्त सौन्दर्य की दृष्टि से सफेद हुए बालों के लिए एक लौह पात्र में त्रिफला क्वाथ का निर्माण करें। 20 से 25 ग्राम त्रिफला चूर्ण का क्वाथ निर्माण कर छानकर उस क्वाथ में मेंहदी चूर्ण भिगा दें एक घंटे तक भीगने के पश्चात् उसका बालों पर लेप करें तथा लेप को कम से कम 3 घंटों तक रहने दें। तीन घंटे बाद षिर धोकर बालों को सुखाकर उनपर नारियल तैल लगायें। इसके अतिरिक्त मुक्ति से काम ले सकते हैं।

13. नीलिका – मुख तथा शरीर के अन्य भागों पर काले रंग के पीड़ारहित मण्डल को नीलिका या न्यच्छ (झाइयां) कहते है। प्रायः कर युवा महिलायें जिन्होंने गर्भ धारण किया है उनमें यह विवृति उत्पन्न होती है।

चिकित्सा –

- रोगी को लगभग तीन दिनों तक मधुयाष्टि चूर्ण 2 ग्राम तथा सनायपत्र चूर्ण 3 ग्राम रात्रि को उष्णोदक से खिलाकर विरेचन कराना चाहिए।
- अविपत्तिकर चूर्ण 2 ग्राम की मात्रा प्रत्येक भोजन के बाद साधारण जल से देना चाहिए।
- प्रवाल पिष्टी 250 मिग्राम + लौह भस्म 250 मिली ग्राम (या धात्री लौह 250 मिग्राम) + शंख भस्म 250 मिग्रा0 तीनों को मिलाकर एक मात्रा बनायें इस प्रकार की दो मात्रायें दिन में दो बार नींबू रस से खाने को दें।
- संतरे के सूखे छिलकों का चूर्ण खड़िया मिट्टी चूर्ण, बादाम चूर्ण, देवदारू चूर्ण, मुलेठी चूर्ण, हल्दी चूर्ण, सफेद चन्दन चूर्ण, लाल चन्दन चूर्ण, अमलतास के पत्तों का चूर्ण इन सभी द्रव्यों को समान मात्रा में मिलाकर इसका लेप बनाकर नीलिका या न्यच्छ स्थान पर लगाना चाहिए लेप जब तक चेहरे पर सूख न जाये तब तक रहने देना चाहिए उसके बाद स्वच्छ पानी से धो देना चाहिए।
- जे0आर0एस0 सिद्धा कम्पनी का लिप्पू आयण्टमेण्ट या लिप्पू तैल को चेहरे पर या उस स्थान पर लगाना चाहिए जहॉ नीलिका उत्पन्न हुई हो।
- यदि नीलिकायें हाथों, पावों की त्वचा पर भी उत्पन्न हो तो रोगी को चिकित्सक से परामर्श हेतु भेज देना चाहिए।

14. इन्द्रलुप्त (Hair fall) – वात के साथ मिला हुआ पित्त रोमकूपों में जाकर रोमों को अथवा बालों को गिरा देता है इसके पश्चात् रक्त के साथ मिला हुआ कफ रोम छिद्रों को बन्द कर देता है जिससे उस स्थान में पुनः बाल उत्पन्न नहीं होते हैं। उस विकृति को इन्द्रलुप्त या खालित्य (गंजापन) कहते हैं।

चिकित्सा – सर्वप्रथम रोगी के शिर पर स्नेहन (दशमूल तैल अथवा सामान्य तिल तैल से) करना चाहिए इसके पश्चात् स्वेदन (दशमूल क्वाथ से) करना चाहिए यह क्रिया पांच दिनों तक करनी चाहिए।

- रोगी के शिर पर काली मिर्च, मैनशिल, कसीस तथा तूतिया एवं तगर के कल्क का लेप लगाना चाहिए।
- चमेली, कनेर, चित्रक और करज्ज के कल्क से सिद्ध तैल से शिर पर अभ्यंग करना चाहिए।
- रोगी को पौष्टिक एवं कम वसा युक्त आहार लेना चाहिए।
- रात्रि में त्रिफला चूर्ण 5 ग्राम की मात्रा में लेना चाहिए।

15. दद्रु (Ring Worm)– कण्डु सहित लाल वर्ण की पिड़काओं से युक्त अभार युक्त मण्डल उभड़े हुए मण्डलों को दद्रु कहते है। दद्रु एक कवकीय व्याधि है तथा इसमें त्वचा में किंचित श्वेत एवं लालिमा युक्त उभार होते हैं तथा कभी–कभी इसमें से श्वेत पपड़िया भी निकलती हैं। ये मनुष्य के त्वचा में स्वेद ग्रन्थियों वाले स्थानों में पैदा होते है, खुजली की भॉति रोगी को अपने चपेट में ले लेते है। अजीर्ण, स्नायुविकार, यकृत विकार तथा गन्दा रहना आदि ऐसे कारण है जिनके कारण चर्म रोग हो सकता है।

सिर में होने पर बालों की जड़े कमजोर होने पर बाल गिरकर वहा गन्ज सा हो जाता है।

चिकित्सा – दद्रु के मण्डल प्रायः कर मुख पर तथा हाथों पर होते हैं जो सौन्दर्य की दृष्टि से अच्छे नहीं दिखते हैं। दद्रु स्थल पर नीम जल तथा नींबू जल से शोधन कर्म करना चाहिए।

- स्वर्णक्षीरी, अमलतास, शिरीस, नीम, राल, इन्द्रजौ, एवं चक्रमर्द बीज इन सभी को समान मात्रा में लेकर उनका लेप बनाकर दद्रु स्थल पर लगाने से दद्रु शीघ्र नष्ट हो जाता है। निम्ब में निम्ब पांचाग्ड.ा चूर्ण (पंचनिम्ब चूर्ण) लिया जाना चाहिए।
- सैंधानमक, चक्रर्माबीज, नागकेश, रसौत एवं गुड़ को समभाग में लेकर चूर्ण बनाकर उस चूर्ण को कैथ के रस (कैथ फलरस) में दद्रु स्थल पर लगाने से दद्रु शीघ्र नष्ट हो जाता है।

16. विचर्चिका (Eczema) – विचर्चिका त्वचा की एक गम्भीर व्याधि है अतः इसका उपचार तो चिकित्सा के छोटे–छोटे एक या दो ब्रण शरीर में विद्यमान होते हैं जो रोगी को कष्ट तो पहुॅचाते ही हैं साथ ही सौन्दर्य की दृष्टि से भी रोगी को कुरूप बना देते हैं ऐसी स्थिति में विचर्चिका के व्रणों का उपचार करना चाहिए।

- विचर्चिका रोग में शरीर के हस्तपाद आदि अवयवों में फटने की सी रेखाये पड़ जाती है उस स्थान पर एक मण्डल सा बन जाता है; अत्यधिक कण्डु होता है खुजलाने से रक्तस्राव भी होने लगता है तथा कभी–कभी उस स्थान से स्राव भी होने लगता है। रोगी को दाह और शूल भी होता है। ऐसे लक्षणों युक्त व्याधि को विचर्चिका (Eczema) कहते हैं।

चिकित्सा –

- रोगी को त्रिफला चूर्ण अथवा अमलतास के गुदे से विरेचन कर्म करवाना चाहिए।

- प्रपुन्नारादि लेप को दो सप्ताह तक लगाने से दद्रु, स्वं विचर्चिवा नष्ट हो जाते हैं, (चक्रमर्द के बीज, बाकुनी, सरसों, तिल, कूठ, हल्दी, दारूहल्दी और नागरमोथा इन सभी द्रव्यों को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बनाकर चूर्ण को तक्र (छाछ) में घोलकर लेप बनाकर लगाना चाहिए)।

गंधक रसायन – आधा से एक ग्राम तक औषधि सूक्ष्म खरल करके हल्दी, मजीठ, अनन्तमूल, ऑवला, गोखरू, गिलोय, काल खैर की छाल, चोप चीनी और नीम की निबौली के काढ़ा के साथ प्रातः सायं एक मास तक प्रयोग करें। फिर एक मास तक औषधि बन्द रखें। एक मास बाद पुनः औषधि प्रारम्भ करें। इसी प्रकार तीन वर्ष तक प्रयोग करायें।

निर्माण विधि :– शुद्ध गन्धक को गाय के दूध, इलायची, दालचीनी, तेज पत्र और नागकेसर के सम भाग का क्वाथ, गिलोय का स्वरस, हरड़, बहेड़ा, ऑवला इनका पृथक–पृथक क्वाथ, भांगरे का रस और अदरक का स्वरस–इन सभी औषधियों को आठ–आठ भावनायें दें। फिर सुखाकर चूर्ण कर लें।

17. नख कवक –एक कवकीय (fungal) संक्रमण है जिससे अगुलियां एवं नखों में शोथ हो जाता है तथा नखों के जड़ों में पीला हरा सा पदार्थ जम जाता है, तथा कभी–कभी शोथ भी हो जाता है। रोगी के नख कुतरे हुए कुरूप हो जाते हैं। रोगी को संक्रमण स्थल में कण्डु भी होता है।

चिकित्सा –

- रोगी की अंगुलियों को नीम जल से अथवा पोटेशियम पर मैग्नेट के घोल से बार–बार धोना चाहिए तथा उस स्थान पर निम्वामृत तैल लगाना चाहिए।

- 6% बैन्जोइक एसिड (Banzonic acid) तथा 3% सेलिसिल्कि एसिड (Salicylic acid) दोनों को मिला कर अंगुलियों पर लगाने से लगभग से लगभग छः माह में व्याधि ठीक हो सकती है।
- रोगी को रात्रि में त्रिफला चूर्ण 5 ग्राम की मात्रा में निरंतर दिया जाना चाहिए।

21. पित्ती उछलना (URTICARIA)

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– इसमें शरीर में जगह–जगह पर लाल–लाल चकतों (ददोड़ों) में सख्त जलन, दर्द एवं खुजली होती है। यह बीमारी पित्त की अधिकता या रक्त की उष्णता के कारण होती है। प्रायः यह बीमारी पाचनक्रिया की गड़बड़ी, ठन्ड लगने या पित्त के न निकलने, अजीर्ण, अग्निमांद्य, कब्ज, बहुत अधिक क्वीनाइन (मलेरिया की ऐलोपैथी औषधि) के प्रयोग, जरायु की किसी बीमारी के कारण, बर्र, शहद वाली मक्खी या खटमल आदि के काटने से तथा वात रोगों के कारण हुआ करती है। लाल मिर्च का एवं गर्म स्वभाव की वस्तुओं का अधिक सेवन, राजसी एवं तामसी (मांस, मछली, अण्डा, शराब आदि) के अधिक प्रयोग, संखिया निर्मित औषधि सेवन से, गीले कपड़े पहनने से, सर्दी–गर्मी से पीठ में फोड़ा होने से, दॉत निकलवाने आदि कारणों से भी यह रोग हो जाता है।

इसमें शरीर पर लाल चकते साधारणतः तीसरे पहर तथा कपड़े उतारते समय निकलते हैं जिनमें सख्त खुजली, जलन एवं दर्द होता है। यह चकते एक जगह दब जाने से फिर दूसरी जगह निकल आते हैं। यह रोग स्वरयन्त्र तथा जिह्वा की श्लैष्मिक कला को आक्रान्त करता है तो मृत्यु तुल्य लक्षण प्रकट होने लगतें हैं। कई बार इसके रोगी को कै (वमन) भी हो जाती है तथा ज्वर भी हो जाता है। कई रोगी तो वर्षो इस रोग से पीड़ित रहते हैं। शीतपित्त एलर्जी से उत्पन्न होती है।

उपचारः– यह रोग पूर्णतः साध्य है। उचित आहार–विहार एवं चिकित्सा से शीघ्र ठीक हो जाता है। मूल कारणों को सर्वप्रथम दूर करें। कब्ज एवं अजीर्ण दूर करें या वमन करवा दें। राजसी, तामसी आहार बन्द करवाकर सुपाच्य, हल्के यथा भूख से कुछ कम गेहूँ की पतली–चपाती, खड़ी मूंग की दाल, हरी साग–सब्जियॉ, मेवे और उपयोगी फल खाने को कहें। पानी में भीगने, ओस में रात को सोने एवं अधिक सर्दी एवं गर्मी से बचायें। नित्य नीम युक्त हल्के गुनगुने पानी से स्नान कराये। मांस, मछली उतेजक खाद्य एवं पेय पदार्थो का सेवन पूर्णतः वर्जित कर दें। नीबू के कटे टुकड़ों से चकतों को मलवायें।

- सिरका तथा अर्क गुलाब समभाग मिलाकर लगायें अथवा ह्विस्की (शराब) 1 भाग और जल 2 भाग मिलाकर सम्पूर्ण शरीर पर मालिश करायें।
- गेरू को खाना तथा गेरू को पीसकर तेल में मिलाकर मालिश कराना उपयोगी है। सर्दी की ऋतु में गेरू और गुड़ मिलाकर गुलगुले बनाकर खाना उपयोगी है।
- नाग केसर 6 ग्राम पीसकर 24 ग्राम मधु में मिलाकर प्रातः एवं सायंकाल चाटना अत्यन्त लाभकारी परीक्षित एवं अनुभूत योग है।
- आरोग्य वर्द्धिनी वटी 125 मि0ली0 को त्रिफला के हिम अथवा ताजे पानी से सुबह–शाम लेने से लाभ होता है।
- बाबवी के बीज का चूर्ण, स्वर्ण गैरिक (सोना गेरू) और शुद्ध गन्धक प्रत्येक 60 ग्राम लेकर एकत्र कर कपड़छन कर चूर्ण बनाकर 2 ग्राम की मात्रा में दिन में 2 –3 बार ताजे जल से प्रयोग कराने से लाभ होता है।
- सर्वतोभद्र रस 250 से 500 मि0ग्राम मधु से दिन में दो बार चटायें।

- आजवाइन और शुद्ध गन्धक सम्भाग लेकर कूट–पीसकर चूर्ण बनाकर 1 ग्राम दवा शहद के साथ चाटने से रोग दूर हो जाता है।

22. कक्षा परिसर्प **(HERPES)**

रोग परिचय, लक्षण एवं कारण– एक प्रकार के सूक्ष्म विषाणु **(Virus)** के बहिर्त्वक, तन्त्रिका ऊतकों तथा स्वेद ग्रन्थियों में संक्रमण से जनेऊ की भॉति दाई या बांई तरफ अनेक लाल पीड़िकाओं के गुच्छे निकल आते है। जिन में तीव्र पीड़ा एवं जलन हुआ करती है। यह पीड़िकाएँ बाद में स्रावयुक्त फफोले बन जाते हैं। यह फफोले प्रायः 5 से 10 दिनों के अन्दर फूट जाते हैं तथा मात्र छाला बनकर रह जाते हैं। छालों के बनते ही उनमें तीव्र पीड़ा जलन एवं खुजली का भयंकर कष्ट प्रारम्भ हो जाता है। यदि 2–3 सप्ताह पर उचित उपचार न हो तो नाड़ी सूत्रों की वेदना, नाड़ी का संज्ञानाश एवं पक्षाघात, फुफ्फुसावरण शोथ, सन्धि शोथ एवं ऑख के रोग आदि कष्ट उत्पन्न हो जाते हैं। जनेऊ के कष्टदायक छाले गुच्छों के रूप में प्रायः मुँह छाती मांथे एवं लिंग की सुपारी में हो जाते है। जब यह रोग लिंग की सुपारी के परदे के नीचे होता है तब इसको अंग्रेजी में 'हपेज जेन्टिलस कहते है' यह सम्भोग के बाद होता है। जिसमें छाले बन जाते है एवं उपदंश (साफ्टसोर) की अपेक्षा जलन एवं खुजली अधिक होती है। इन्द्रिय को ठन्डे पानी में डुबाये रखने से जलन कम हो जाती है।

जब यह रोग दो पसलियों के मध्य या पीठ पर हो तब इस रोग को 'हर्पेज जास्टर' कहते है। इसमें लैड लोशन या कैलेमन लोशन में लिन्ट भिगोकर

छाती पर रखें। कई बार 'हर्पेज जास्टर' का संक्रमण दिमाग की पांचवी मांसपेशी से होकर ऑख के आस–पास चला जाता है जिसके फलस्वरूप दृष्टिनाश का भय रहता है। ऐसी अवस्था में सिर पर ठन्डे पानी की गद्दी रखना और आंखों में ऐलोपैथिक मैडिसिन (एट्रोपीन लोषन) डालना लाभप्रद है।

चिकित्सा– यदि कब्ज हो तो रोगी को नमकीन जुलाब दें, ताकि 2–4 खुलकर दस्त आ जायें एवं पेट साफ हो जाये। दर्द–जलन को दूर करने हेतु दर्द निवारक औषधि प्रयोग में लाये। 'दाद, खाज, खुजली' के अन्तर्गत लिखी हुई औषधियॉ प्रयोग में लायें। अर्थात् खुजली रोग की भॉति चिकित्सा करें। पुष्पान्जन (सफेदा) सिन्दूर, ढेला कपूर, श्वेत चन्दन का तेल प्रत्येक 12 ग्राम, रसकर्पूर 6 ग्राम तथा गाय का जल से 100 बार धोया गया घी 120 ग्राम मिलाकर मलहम बनाकर स्थानिक प्रयोग करायें। यह रोग सुप्रसिद्ध वैद्य (आचार्य) विक्रम जी यादव का है, जो अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है।

23. गट्टा, गोरखुल (CORN)

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– तंग जूता पहनने से एवं उसके दबाव और रगड़ से प्रायः पॉव के अंगूठे या छोटी अंगुली के जोड़ की त्वचा सख्त हो जाती है, जिसमें चलते समय दबाव पड़ने से दर्द होता है तथा जूता पहिनना असहनीय हो जाता है। कभी–कभी कोई कांटा या अन्य कटीली चीज भी पैर में चुभ जाती है और उसकी यदि न निकाला जाये तो भी बाहरी त्वचा कड़ी होकर गोरखुल का रूप ले लेती है। मजदूरों, मल्लाहों तथा आरा चलाने वालों की हाथ की अंगुंलियों में अधिकतर गट्टे पड़ जाते है।

(1) तेज ब्लेड या उस्तरे से गट्ठे को काटकर उसकी जड़ तक पहुॅचा दें। याद रखें कि गोरखुल के सबसे नीचे छिद्र में पीप (PUS) रहती है। इस छिद्र को

त्वचा की ओर काटकर समस्त पीप को हाइड्रोजन पर आक्साइड या एक्फ्ले बिन लोशन से लगाकर रूई से भली–भॉति साफकरके उसमें विशुद्ध कार्बोलिक ऐसिड 1 सा 2 बूँद डाल दें और पट्टी बॉध दें। फिर सामान्य जख्मों की भॉति उपचार करें। या गट्टे को गर्म पानी से भिगोकर नर्म करके उसतरे से सावधानी के साथ छील डालें, फिर उस पर फिटकरी गर्म पानी में भिगोकर रगड़ें।

(2) फिटकरी, सुहागा, नौषादर सिरकें मे पीसकर लगाना भी लाभप्रद है।

(3) गर्म पानी में खील की हुई फिटकरी, सरसों का तेल मिलाकर लगाना भी हितकारी है।

(4) तॉबे का टुकड़ा या पुराना तॉबे का पैसा (सिक्का) पानी में घिसकर गट्टों पर लगाते रहने से बड़े–बड़े सख्त गट्टे भी समाप्त हो जाते है। तंग जूता पहनना बन्द करवां दें।

(5) गट्टे को काट व छीलकर एवं सफाई करने के उपरान्त कार्नएन वार्ट रिमुवर (कैम्प एण्ड कम्पनी) का लगायें या कार्न कैम्स (प्लास्टर) चिपकायें।

(6) बरसाती ओले को गोरखुल पर रखने से वह गल जाता है तथा कुछ लोग इसको काट–छील व सफाई के उपरान्त खाना वाला पीसा हुआ नमक भर देते हैं, इससे भी लाभ होता है।

24. कारबंकल (CARBUNCLE)

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– इस रोग को राज फोड़ा अदीठ फोड़ा, मधुमेह–विनता, प्रमेह पिटिका आदि नामों से भी जाना जाता है। साधारणतः यह रोग मध्य आयु वालों को होता है। अक्सर युवावस्था में नहीं होता। अधिक आयु वर्ग के लोगों का जब शरीर कमजोर हो जाता है या मधुमेह रोग हो जाता है

जो इस रोग का प्रधान कारण है। अथवा रक्त दोष के कारण छोटे जोड़ों को दर्द (गठिया) आदि के कारण यह रोग हो जाता है।

इस प्रकार का फोड़ा प्रायः गर्दन, पीठ, चूतड़ की चर्म और उसके गहरे मांस से निकला करता है। इस फोड़े के स्थान की चर्म बहुत अधिक लाल हो जाती है तथा उसे सख्त दर्द एवं शोथ होती है। व्रण निरन्तर बढ़ता और फैलता चला जाता है तथा काला सा हो जाता है तत्पश्चात् अक्सर उस पर एक छाला पैदा होकर जब वह फूटता है तो उसमें कई छेद दिखलाई पड़ते है। घाव प्रतिदिन बढ़ता जाता है अन्ततः पूरे फोड़े की चर्म छलनी की भॉति छिद्रयुक्त हो जाती है। कई बार कई छोटे–छोटे छेद मिलकर एक बड़ा छेद बन जाता है जिसमें से काले रंग के छिछड़े निकलते हैं। फलस्वरूप रोगी को बहुत भयंकर कष्ट होता है। इस फोड़े से हर समय पतली पीप बहती रहती है किन्तु यदि पीड़ित स्थान को दबाया जाये तो गाढ़ी पीप की कीलें निकलती है। इस फोड़े की यदि लापरवाही की जाये तो घातक सिद्ध होता है। जब कि यह फोड़ा उचित चिकित्सा के फलस्वरूप अच्छा हो जाता है, तब मात्र एक दाग सा रह जाता है, इस रोग के समय रोगी को प्रायः ज्वर हो जाता है तथा रोगी कमजोर भी हो जाता है, कभी–कभी अन्य कीटाणुओं के कारण यह अति भयंकर रूप धारण कर लेता है जिसके कारण रोगी की मृत्यु भी हो सकती है।

उपचारः– कारबंकल के घावों को नीम की पत्तियों तथा मेहन्दी की पत्तियों के क्वाथ से भली–भॉति धोकर साफ करे तथा फोड़े की पस (पीप) की कीलों को निकलाकर अनार का छिलका, मसूर बिना छिलका तथा गेरू (प्रत्येक 12 ग्राम) को पीसकर तीन वर्ष पुराने गुड़ में घोटकर लेप तैयार करके लगावें। यह लेप कारबंकल, कैन्सर और प्रत्येक प्रकार के जटिल घावों के लिए रामवाण है। जब तक घाव पूर्णरूप से ठीक न हो जाये तब तक यह लेप प्रयोग करते रहें।

नोटः– इस रोग की उत्पत्ति की प्रधान कारण की ध्यान पूर्वक परीक्षा करनी चाहिए। मूत्र परीक्षा से मधुमेह मालूम हो तो उसका उपाय करें। यदि फोड़ा प्रारम्भिक अवस्था में हो तो सूजन के ऊपर दोषहन लेप यथा दषांग लेप आदि की गरम–गरम पुल्टिस बॉधनी चाहिए। यदि भीतर पीप मालूम हो तो तुरन्त शस्त्र–चिकित्सा कर देनी चाहिए, इसमे विलम्ब न करें। शस्त्र द्वारा फोड़े में से सड़ा हुआ भाग निकालकर थोड़े दिनों तक पुल्टिस बॉधते रहना चाहिये और फिर घाव में कार्बोलिक एसिड 2 भाग तथा ग्लेसरीन 5 भाग मिलाकर अच्छी तरह लगाना चाहिये और फिर प्रतिदिन जात्यादि तेल या जात्यादि मरहम का प्रयोग करना चाहिये इससे घाव शीघ्र भर जाता है।

25. फोड़ा, विद्रधि (Abscess) बालतोड़ (Folliculites)

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– बालों की जड़ों मे 'स्टेफिलो कोकस' नामक कीटाणु के संक्रमण से, रक्त विकृति के कारण बाल के उखड़ जाने से, वर्षा ऋतु में कच्चे या पके आमों के अधिक सेवन से तथा शारीरिक कमजोरी के कारण फोड़े–फुंसियों का रोग हो जाया करता है। पहले इसमे दर्द एवं सूजन हुआ करती है तथा बाद में पीप पैदा हो जाती है अनेक फुन्सियॉ बिना पके ही ठीक हो जाती है तथा अधिकतर पककर कठोर हो जाती है एवं इनमें कोर रहता है। कोर के पीप के साथ बाहर निकल जाने पर, दर्द, जलन शोथ आदि के कष्टों में आराम आ जाता है।

उपचारः– दशांग लेप लगायें या अलसी (तीसी) को गरम करके लेप लगायें इससे फोड़ा जल्द पककर फूट जायेगा। तत्पश्चात् कोई मरहम लगाकर पट्टी करें।

- कालाजीरा को पानी में पीसकर लगाने से फोड़े–फुन्सियों को आराम आ जाता है। तिल का तेल 30 ग्राम लोहे की कड़ाही में डालकर पकायें, जब पकने लगे तो इसमें 10 ग्राम सिन्दूर मिलाकर लोहे की छड़ी या सींक से चलाते रहें। जब रंगत स्याह होने लगे एवं गाढ़ा हो जाये तब उतार कर किसी चौड़े मुँह वाली शीषी या डिब्बे में सुरक्षित रख लें। आवश्यकता पड़ने पर पीड़ित स्थान पर चिपका दें। सड़े–गले घावों को यह मरहम बहुत शीघ्र अच्छा कर देता है।
- पीपल के पत्ते को घी से चिकना कर उसे आग पर गरम कर सुहाता–सुहाता गुनगुना पीड़ित स्थान पर बॉधें। फोड़ा बैठ जायेगा या पककर फूट जायेगा।

नोटः– चिकित्सा से पूर्व पेट साफ करने के लिये 'खदिरारिष्ट' विरेचन और फिर नित्य प्रति 'सन्षमनी वटी' खिलानी चाहिये। यदि बार–बार फोड़े–फुन्सियॉ निकले तो खून की खराबी समझनी चाहिये तथा जिस रोग के कारण रक्त दोश हो उसकी चिकित्सा भी करनी चाहिए।

- महा मजिश्ठाद्याारिश्ट 15 से 30 मि0ली0 बराबर जल मिलाकर भोजनोपरान्त सेवन करायें। महातिक्त घृत–प्रातः शाम 1–2 ग्राम खिलायें।
- कुटकी और चिरायता प्रत्येक 5–5 ग्राम रात को जल में भिगोकर रखें तथा प्रातः छानकर 15 से 30 मि.ली. की मात्रा में रोगी को पिलायें, इसी प्रकार प्रातः भिगोकर रखें और शाम को पिलायें बच्चों को 1/4 से 1/2 मात्रा दें।

28. युवापिडिका, मुंहासे (ACNE VULGARIS)

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– युवक युवतियों को मुंहासे क्यों निकलते हैं, इस का ठीक–ठीक पता नहीं चला है। फिर भी विद्वान आचार्यो का मत है कि यह प्रायः वसा ग्रन्थियों के विकार तथा प्रणाली विहीन ग्रन्थियों के अनुजलन से उत्पन्न होता है। पुरूषों के अन्डकोषों के अन्तःस्राव के विकार, अजीर्ण, रक्त में गर्मी की अधिकता (रक्तदोष) गर्म स्वभाव के खाद्य एवं पेय पदार्थो का अति सेवन, बवासीर का रक्त आने, बन्द हो जाने, अधिक व्यायाम, कार्बोहाइड्रेट एवं वसा पदार्थो का अति सेवन कारणों से ये उत्पन्न हो जाता है। चिकने चर्म वाले मनुष्यों को यह अधिक होता है। वैसे जवान लड़का–लड़कियों को उनके चेहरों पर यह मुंहासे अक्सर निकल आते हैं जो 25–26 वर्ष की आयु तक स्वयं दूर हो जाते हैं। इनका स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता है, केवल चेहरा भद्दा (बुरा) लगने लगता है।

यह विशेषतः युवावस्था में उत्पन्न होने वाला शोथयुक्त चर्म रोग है। नवयुवकों तथा नवयुवतियों के चेहरों पर कीलें सी निकल आती हैं जो कुछ दिनों के बाद आगे चलकर सख्त हो जाती है। इन कीलों को तोड़ने पर गाढ़ी लेसदार पीप निकलती है, कीलों का मुॅह नुकीला होता है, इनमें दर्द भी होता है, कभी–कभी पीप निकलने के बाद वहॉ पर व्रण या धब्बे रह जाते हैं। जिनके फलस्वरूप चेहरा कड़ा तथा कुरूप हो जाता है। यह चेहरे के अतिरिक्त गर्दन एवं छाती पर भी निकल आते है, जिनके पेंदे सख्त लाल होते हैं। पक जाने पर इन सभी में कील तथा थोड़ा सी पीप निकलती है। यह बहुत अधिक दिनों तक चलने वाली बीमारी होती है।

उपचारः– रोग पूर्णतः साध्य है। उचित आहार–विहार तथा चिकित्या आवश्यक है ताकि मुख–सौन्दर्य जो प्रकृति ने वरदान स्वरूप प्रदान किया है, वह कम न हो जाये।

- रोगी को बार–बार ग्लीसरीन साबुन से मुह धोना चाहिए।

- किसी भी प्रकार का तैलीय पदार्थ अथवा क्रीम मुख (चेहरे) पर नहीं लगाना चाहिए।
- नीम की भाप जल से चेहरे को दिन में दो बार प्रातः एवं सांय स्वेदन करना चाहिए। इससे तैल ग्रन्थियों के मुख खुल जाते हैं।
- पीड़िकाओं को किसी प्रकार से किसी भी स्थिति में दबाना नहीं चाहिए।
- रोगी के चेहरे पर बच, लोध्र, कूठ एवं टंकणभस्म का सम मात्रा में मिला चूर्ण का लेप लगाना चाहिए, लेप चेहरे पर कम से कम दो घंटों तक अवश्य लगा रहना चाहिए। लेप दिन में दो बार लगाया जाना चाहिए तथा लेप स्वेदन के पश्चात् ही लगाया जाना चाहिए।
- रोगी को सुबह शाम निम्वादि चूर्ण 2–2 ग्राम तथा रात्रि को पंचशकार चूर्ण 2 ग्राम गुनगुने जल के साथ खाने को देना चाहिए। दो से तीन सप्ताह में पीड़िकायें समाप्त हो जाती हैं।
- कब्ज रहता हो तो मृदु विरेचन देकर कब्ज अवश्य दूर करें। हरी साग–सब्जियॉ उबाल कर खाने से या उनका रसपान करने से यह रोग घट जाता है।
- त्रिफला और मुलहठी मिलाकर 3–4 ग्राम नित्य खाते रहने से कब्ज दूर होने के साथ ही साथ कील (मुंहासे) भी दूर हो जाते है।
- यदि रक्त अधिक हो तो 1–2 जुलाब दें। पाचनांगों के दोष एवं कमजोरी को दूर करें। स्त्री को यदि प्रदर–विकारके कारण मुहांसे का रोग हो तो उसके मासिक विकारों की चिकित्सा करें।
- काली मिर्चो को पानी में घिसकर मुंहासों पर लगाने से रोग दूर हो जाता है।

- कैस्टर ऑयल में चने का आटा मिलाकर चेहरे पर मालिश करने से रोग नष्ट हो जाता है।
- यदि रोग ज्यादा पुराना हो तो सारिवाद्यासव और खदिरारिष्ट का दस–दस मी0ली0 सम्भाग जल से भोजनोपरान्त भी प्रयोग करें।
- भुनी हुई फिटकरी को समभाग काली मिर्च मिलाकर बारीक घोटकर तथा पानी में घोलकर मुहांसों तथा मस्सों पर लगाने से वह मिट जाते है। जहॉ कहीं भी रक्त बहता हो वहॉ यदि इसे लगाया जाये तो रक्तस्राव बन्द हो जाता है।
- मसूर की दाल को बारीक पीसकर दूध में फेंट लें, तत्पश्चात् मुॅह पर लगाकर थोड़ी देर बाद रगड़कर धो–पोंछकर साफ कर लें। मात्र 5–7 दिनों के प्रातः एवं सांय के नित्य प्रयोग से ही मुंहासे सदैव के लिए नष्ट हो जायेगें तथा पुनः निकलेंगे भी नहीं।
- जायफल एवं काली मिर्च (दोनों) को दूध में घिसकर मुंहासों पर लगाने से आराम हो जाता है।
- सफेद प्याज का अर्क 10 ग्राम, शहद 5 ग्राम, सैंधा नमक 1 ग्राम तीनों को मिलाकर छानकर रखें, मुॅहासों पर इसे लगाने से वे मिट जाते हैं तथा इसे यदि नेत्रों (ऑखों) में डाला जाये तो नेत्र संबंधी अनेक विकार दूर होकर नेत्रों की सफेदी मिट जाती है तथा पानी बहना बन्द हो जाता है।
- छुहारा की गुठली सिरके में घिसकर मुॅहासों पर लगायें तथा एक घन्टे के बाद मुख को साबुन से धो डालें। मात्र 4–6 दिनों के प्रयोग से मुॅहासों से निजात मिल जायेगी।

29. श्वेत कुष्ठ, श्वित्र **(LEUCODERMA)**

रोग परिचय, लक्षण एवं कारणः– इसके कारणों का ठीक–ठीक पता नहीं चला है। शरीर के विभिन्न भागों–चेहरा, होंठ, टांग, हाथों आदि पर पहले छोटे–छोटे सफेद दाग पड़ते है जो धीरे–धीरे फैलते चले जाते हैं। यह गोरे लोगों की अपेक्षा काले लोगों को अधिक होता है। शरीर में उपदंश या पाराविष, नाडत्री विकार जिसमें रीढ़ की हड्डी खराब हो आदि कारणों से यह रोग होता है। सफेद दाग, के रोगी से लोग घृणा करने लगते हैं जो सर्वथा अनुचित है क्योंकि रोगी को स्पर्श आदि से यह संक्रमक रोग न होने के कारण कोई भय नहीं रहता है। इसमें चर्म का ऊपरी भाग (सूक्ष्म पर्दा) आक्रान्त होता है। रोगी कष्ट का कोई भी अनुभव नहीं करता है, मात्र शरीर बुरा दिखलाई पड़ता है।

उपचारः– सफेद दाग वाले चर्म को चुटकी से ऊपर उठाकर मांस से पृथक करके उसमें सुई चुभो कर देंखें। यदि उसमें रक्त निकल आये तो चिकित्सा योग्य साध्य समझें, यदि पानी जैसा तरल निकले तो असाध्य है। यदि दाग छोटे तथा कम हैं, तो जल्द ही उचित चिकित्सा व्यवस्था व आहार–विहार से लाभ हो जाता है।

- ब्राहीपंचांग, लहसुन, सैंधा नमक और चीतामूल (प्रत्येक 12–12 ग्राम) लेकर गौ मूत्र में पीसकर लेप करायें।
- बाकुची के बीज 200 ग्राम, हरताल 48 ग्राम, मैनसिल तथा चीता की जड़ 6–6 ग्राम लें। सबको गोमूत्र में पीसकर दिन में 3 बार लेप किया करें।
- अपामार्ग भस्म 12 ग्राम मैनसिल में मिलाकर जल के साथ पीसकर सफेद दागों में दिन में दो बार लेप कराया करें।
- कत्था एवं आंवला का चूर्ण 12–12 ग्राम 250 मि.ली. जल का क्वाथ बनाकर जब मात्र 30 मि.ली. जल शेष बचे, तब इसे छानकर तथा इसमें बाकुची 12 ग्राम मिलाकर ऐसी एक मात्रा प्रातः तथा सायं प्रयोग करायें।

आयुर्वेदिक मतानुसार (कुष्ठ)

कारण– विकृति को प्राप्त सात द्रव्य कुष्ठों के कारण होते हैंः– प्रकुपित करने वाले कारणों से विकृत तीन दोष– 1. वात 2. पित्त 3. कफ और दोषों के उपघात से विकार को प्राप्त दृष्य (जो दूषित किये जाते हैं) 1. त्वचा 2. मांस 3. रक्त लसीका। इस प्रकार विकृत हुआ यह सातों दोष दृष्यों को समूह सात प्रकार के कुष्ठों को उत्पन्न करता है।

जो शरीर के अवयवों को कुरूप कर दे अथवा गला–सड़ा दे उसे कुष्ठ कहते है। वास्तव में उक्त परिभाषा के अनुसार कुष्ठ सामान्य चर्मरोग (skin disease) के लिये और (Leprosy) गलित कुष्ठ के लिये प्रयुक्त होता है।

सामान्य चर्म रोगों का वर्णन हो चुका है फिर भी इनके कारण– 1. वायु से 2. पित्त से 3. कफ से 4. वात पित्त से 5. वात कफ से 6. पित्त कफ से व त्रिदोष से जिस स्थान पर कुष्ठ उत्पन्न होता है उस स्थान पर पसीना न आना, अधिक पसीना आना, कठिनता या खुरदरापन या अत्यन्त चिकनापन, त्वचा के रंग में विकृति, कण्डू (खुजली) निस्तोद स्पर्श ज्ञान का अभाव, चारों ओर जलन, झुनझुनी होना, रूखापन विर्सप, सूजन, शरीर में रोमकूप तथा आंख, कान, नाक क ामल से लिपा रहना, पके जले सर्प आदि के काटे, चोट लगे या फिसल जाने से लगी चोट वाले स्थानों पर अत्यन्त कष्ट का होना छोटे घावों का दूषित होना या देर से भरना।

चिकित्साः– और उपाय न हो विरेचन के बाद मॉस रस का प्रयोग कुष्ठ में लाभकारी है।

तिल के तेल का प्रयोग आन्तरिक सरसों का वाह्य प्रयोग के लिये।

खदिर, नीम, पटोल के पत्ते, काण्ड व बार्क का प्रयोग करें।

त्रिफला, बिना छिलके की दालें, पुराना घी, विडग व खदिर का साथ–साथ प्रयोग करें।

स्वस्थ त्वचा हेतु कुछ सामान्य उपाय –

स्वस्थ त्वचा न केवल आनन्द को बढ़ाने वाली होती है, बल्कि मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाती है।

त्वचा को स्वस्थ एवं स्वच्छ रखने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है–

1. **आहार** :– सदा सन्तुलित एवं सुपाच्य भोजन का प्रयोग करें। भोजन में विटामिन एवं प्रोटीन का ध्यान रखें। भोजन में दूध, हरीसब्जी एवं दालों का सेवन करें।
2. **ताजी ठण्डी हवा** :– ताजी ठण्डी हवा त्वचा के लिए बहुत लाभदायक है। अतः अधिक से अधिक कोशिश करके ताजी ठण्डी हवा में सम्पर्क में रहना चाहिए। इसके लिए सुबह की सैर सर्वोतम है। क्योंकि सुबह–सुबह की हवा दिन की अपेक्षा अधिक ठण्डी और ताजी होती होती है।
3. **नियमित व्यायामः**– नियमित व्यायाम करने से भी त्वचा स्वच्छ और स्वस्थ रहती है। तथा त्वचा की कांति बढ़ती है।
4. **स्नान** :– रोजाना स्वच्छ ताजे जल से स्नान करने से भी त्वचा चमकदार स्वच्छ एवं कांतिमान होती है।

अभ्यास

प्रश्न 1. किन्हीं दस क्षुद्ररोगों के नाम तथा आधुनिक चिकित्सा में उनकी तुलना किस त्वचा रोग से की गयी है लिखे।

प्रश्न 2. निम्न की संक्षिप्त में परिचय एवं चिकित्सा लिखें –

अ. दद्रु

ब. इन्द्रलुप्त (Hair fall)

स. युवान पीड़िका (Acne Valgaris)
ड. दारूणक (Dandruff)

प्रश्न 3. निम्न की विस्तृत में वर्णन करें –
अ. परिसर्प (Herpes)
ब. कार्न (गोरखुल)

इकाई – 3

सौन्दर्य एवं हमारा शरीर

उद्देश्य – प्रकृति द्वारा सृजित प्रत्येक वस्तु सौन्दर्य से पूर्ण है, हम सभी प्रकृति की सुन्दर संरचनाएं हैं। सौन्दर्य का निर्णय व्यक्ति विशेष की दृष्टि पर निर्भर करता है। मूलतः सौन्दर्य वाह्य एवं आंतरिक गुणों पर निर्भर करता है निर्जीव चित्र में गुणहीन परन्तु वाह्य रूप से आर्कषक व्यक्ति सुन्दर दिखाई देता है परन्तु सौन्दर्य की सम्पूर्ण परिभाषा के आधार पर व्यक्ति तभी सर्वांगपूर्ण सुन्दर माना जाता है जब वह वाह्य एवं आन्तरिक दोनों आधारों पर सौन्दर्य से पूर्ण हो।

वाह्य सौन्दर्य हेतु आयुर्वेद में विभिन्न लेप, प्रलेप, अभ्यंग आदि का वर्णन किया गया है तथा साथ ही आन्तरिक सौन्दर्य हेतु ध्यान एवं योग का वर्णन भी विस्तार से किया गया है। प्रस्तुत इकाई का मुख्य उद्देश्य शरीर एवं सौन्दर्य की इन्हीं मूल समस्याओं को स्पष्ट करते हुए उनके समाधान पर प्रकाश डालना है।

सौन्दर्य एवं हमारा शरीर

एक स्वस्थ शरीर में सौन्दर्य का वास होता है। यदि मनुष्य का शरीर स्वस्थ हो तो उसमें प्राकृतिक सौन्दर्य स्वयं ही उत्पन्न हो जाता है। जीवन पर्यन्त की गयी देखभाल से मनुष्य जीवन पर्यन्त सौन्दर्यवान रह सकता है।

सौन्दर्य स्वस्थ शरीर में ही निवास करता है शारीरिक स्वास्थ्य, खानपान और अच्छी आदतो, आसपास के वातावरण आदि पर निर्भर करता है और सौन्दर्य की देखभाल के लिए बहुत साधारण बाते महत्वपूण होती है।

जीवन क्या है? एक प्रकार की सपंदित चैतन्य स्थिति, जिसमें मानव सहित सभी जीव अर्थात् पशु–पक्षी, पौधे अपने कार्यो को निर्बधता के साथ सम्पन्न करते हैं। यक एक प्रकार की हरकत है। जिसमें खाना, पीना, मलविसर्जन करना, सोना, चलना, फिरना, दौड़ना, भावों को व्यक्त करना, सभी शामिल है। मृत्यु में यह सब बन्द हो जाता है। जीवन में स्वास्थ्य एक ही सिक्के के दो पहलू है। जहां स्वास्थ्य है वहां जीवन है। प्यार है, खशबू है। सुन्दरता व प्रसन्नता है, आनन्द है, और जहां स्वास्थ्य का आभाव है वही कुरूपता है, पीड़ा है कुण्ठा है अशान्ति है।

स्वस्थ्य व्यक्ति बादल की तरह होता है जो अपनी सक्रियता में उमड़ता घुमड़ता हुआ अमृत की वर्षा करता रहता हैं वह फूल की तरह होता है कोमल खुशबुदार रेशम की तरह मुलायम चमकीला तेजस्वी उर्जावान। पर्वत की तरह होता है मजबुत, दृढ़ और अडिग। उसका प्रत्येक अंग गुनगुनाता है, भरपुर श्वांस लेता है, आर–पार देखता है शक्तिशाली होता है, सोता है, जागता है, सोचता है, पचाता है, स्पंदित होता है लेकिन एक पूर्णता के साथ ऐसे स्वास्थ्य की एक महक हमें दूर से ही अनुभव हो जाती है। स्वस्थ व्यक्ति की त्वचा आभायुक्त एवं सुन्दर होती है, बाल काले घने एवं चमक युक्त होते हैं आंखे भी चमकदार होती है। ऐसे उर्जावान व्यक्तियों के हम अधिकाधिक करीब जाना चाहते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि स्वस्थ व्यक्ति ही सुन्दर दिखता है।

स्वस्थ शरीर का प्रत्येक अंग अपने आप चुपचाप सम्पूर्णता के साथ कार्य करता रहता है। आंखें निकट एवं दूर तक के सभी दृष्यों को देख सकती हैं, मस्तिष्क गहराई तक सोच सकता है। पेट द्वारा भोजन पूरी तरह पचा लिया जाता

है। भूख खुल कर लगती है। प्र्याप्त मात्रा में नींद आती है। सुबह उठने पर ताजगी का भरपुर अहसास होता है। लेकिन ऐसा उच्च कोटि का स्वास्थ्य प्रायः अब दिखाई नहीं देता, क्योंकि हम प्रकृति से बहुत दुर चले गये हैं। हमारा शरीर एक अत्यन्त जटिल मशीन सदृश है। इसे संसार का अनोखा आश्चर्य मान सकते हैं। हम दूसरी मशीनों की सही देखभाल करते हैं उनको सही रखने के लिए अपना श्रम पैसा व समय लगाते हैं परन्तु आश्चर्य यह है कि जिस शरीर के द्वारा हमारा स्वयं का अस्तित्व है उस शरीर रूपी मशीन के रखरखाव व उसकी कार्यक्षमता पर ध्यान नहीं देते हैं। व लगातार वर्षों शरीर के स्वास्थ्य नियमों की अवहेलना कर उसको चलाते रहते हैं। शरीर का उचित देखभाल नहीं किये जाने पर एक सीमा के बाद शरीर रोग लक्षणों के रूप में चेतावनी देना आरम्भ कर देता है। हमारा शरीर पुरी एक इकाई है। जिसके विभिन्न अंग इस इकाई के कार्य में अपना योगदान करते हैं जैसे बृक्कों (Kidneys) का कार्य केवल स्थानिक नहीं है अपितु वह पुरे शरीर की गन्दगी को बाहर निकालती है। अगर हमारे बृक्क सही काम नहीं करेगी तो हमारे शरीर की आन्तरिक सफाई नहीं हो सकती हमारी त्वचा स्वच्छ व चमकीली नहीं दिखाई देगी। बाहर से हम चाहे जितनी भी सफाई कर लें। पूरे शरीर में सूजन आ जायेगी और आंखों के नीचे भी सूजन आयेगी। हमारे शरीर में विषैले तत्व इकट्ठे हो जायेंगे और हम अस्वस्थ हो जायेंगे।

इसी प्रकार हृदय सारे शरीर में रक्त संचालन के लिए उत्तरदायी है। अगर हमारा हृदय सही ढंग से काम नहीं करेगा तो सारे शरीर में सूजन आ जायेगी और व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की बिमारियां लग जायेंगी। और व्यक्ति सुन्दर नहीं दिखाई देगा।

हमारे शरीर में कई सारी अंतःस्रावी ग्रंथियां (Endocrine glands) होती हैं। यदि जैसे थायराईड ग्रंथी अगर ये सही तरह से काम नहीं करती इसका स्राव कम होता है तो शरीर मोटा हो जाता है, त्वचा रूखी हो जाती है, बाल गिरने लगते हैं और महिलाओं में कई तरह की बिमारियां उत्पन्न हो जाती हैं।

इसी तरह हमारी पाचन शक्ति कमजोर होने से खाना सही तरह से नहीं पचता है, शरीर में कई तरह के विटामिन्स, मिनरल्स आदि की कमी हो जाती है, हमारा शरीर कमजोर हो जाता है, आंखों के नीचे गडढे हो जाते हैं, बाल झड़ने लगते हैं, झुर्रियां पड़ने लगती है, बाल समय से पहले पकते हैं। कब्ज होने से शरीर में झाईयां व मुंहासे उत्पन्न हो जाते हैं।

इस तरह से हम देखते हैं स्वास्थ्य व सुन्दरता का गहरा सम्बन्ध है। यदि व्यक्ति स्वस्थ नहीं है तो वो कभी सुन्दर नहीं दिख सकता है। स्वास्थ्य का सम्बन्ध व उसका टिका होना उन सभी जरूरी तत्वों से है जिस पर हमारा जीवन टिका हुआ है–प्रकाश, वायु, जल, उचित भोजन, एवं मानसिक भावों की पूर्ति इन्हीं से हमारा शरीर बनता है लेकिन इन तत्वों की विषमता से हम रोगी हो जाते हैं। इनकी समता व साम्यत्व ही स्वास्थ्य व रोगमुक्ति है। स्वस्थ रहने की इस होड़ में लगे स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहने वाले लोग अपने स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए नाना प्रकार के उपाय कर रहे हैं। प्रातः उचित समय पर उठना, शौच से निवृत होना, टहलना, व्यायाम करना, योगाभ्यास व्यायाम, प्राणायाम, संतुलित भोजन, तनावमुक्ति के लिए मनोरंजन के साथ–साथ प्राणायाम एवं ध्यान, शरीर शुद्धी के लिए प्राकृतिक चिकित्सा व पंचकर्म चिकित्सा कर्मों के द्वारा समय–समय पर शरीर का संशोधन करना आदि महत्वपूर्ण कर्म हैं, जिनका लाभ उठाना चाहिये। आधुनिक युग में मानव ने प्रकृति के गुढ़ रहस्यों की खोज करने की चेष्टा तो की है किन्तु उस प्रयास में प्राकृतिक एवं स्वाभाविक दिनचर्या से विमुख होकर व एक तनाव भरी

कृत्रिम जीवन शैली अपनाने के लिए विवश हो गया है। जिससे उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया है व सुन्दरता लुप्त हो गई है। व्यक्ति बाहरी सुन्दरता पर अधिक ध्यान देने लगा है। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्ति को अपनी स्वास्थ्य की देखभाल करनी चाहिये। अगर वह स्वस्थ है तो सुन्दरता अपने आप आ जाती है।

सुन्दर लगने की चाह हर मानव की सहज कामना है। भारत के प्राचीन योगियों ने अच्छे स्वास्थ के लिए जो सिद्धान्त बताए थे उन्हें अपनाने का आज भी परार्मश दिया जाता है। प्राणायाम (सही ढंग से श्वास लेना) उन्हीं सिद्धान्तों में से एक है। सही ढंग से श्वास लेने से पूरा शरीर शुद्ध हो जाता है।

आज के युवाओं के चेहरे पर थकान और निराशा झलकती है। इसका कारण उनकी गलत जीवन पद्धति ही है आज के युग में हम स्वास्थ्यदायी नियमों को पालन करने की आवश्यकता है। जितना हम प्राकृति से दूर जा रहे है इतनी ही हमारे स्वास्थ्य और सौन्दर्य को हानि पहुंच रही है। आवश्यकता इस बात की है कि हम प्रकृति की ओर लौट कर अपने स्वास्थ्य व सौन्दर्य की देखभाल करें।

स्वास्थ्य का सौन्दर्य से गहरा रिश्ता है। यदि व्यक्ति स्वस्थ है तो उसका शरीर अपने आप ही स्वस्थ व सुन्दर दिखता है।

सुन्दरता के लिए महत्वपूर्ण अवयव त्वचा है स्वस्थ त्वचा में असमय ही झुर्रियां या झाइयां (दाग धब्बे) आदि उत्पन्न नहीं होते हैं।

त्वचा की तरह बाल भी अपने आन्तरिक स्वास्थ्य का प्रकट करने वाले चिन्ह है। स्वस्थ व्यक्ति के बाल भी मजबूत व चमकदार होते है। यदि व्यक्ति स्वस्थ है तो बाल भी जल्दी गिरेगे नहीं बालों को भी उचित पोषण मिलता रहेगा। बाल समय से पहले पकते भी नहीं है।

यदि आप सामान्य आहार लेते है तो इस बात की झलक आपके बालों में भी मिलेगी। इसके विपरीत बिमारी, तनाव, व कमजोरी आदि से आपके बालों के लिये अनेक समस्यायें पैदा हो जायेगी अच्छे बालों के लिये उन तक सही रक्त संचार होना आवश्यक है। इसके लिये हमारा प्रतिदिन का आहार और सामान्य जीवनचर्या बहुत महत्वपूर्ण है। शरीर के अन्दर की बीमारियों औषधियों की प्रतिक्रिया और भोजन में पोषक तत्वों की कुछ कमी रह जाने से बाल झड़ने आरम्भ हो जाते है। शरीर की अनेकों बिमारियों का असर भी शरीर की त्वचा तथा बालों के स्वास्थ्य पर पड़ता है। यदि उचित दिनचर्या के बाद भी त्वचा में या बालों में कुरूपता उत्पन्न हो रही हो तो अवश्य ही चिकित्सकीय परामर्श लेना चाहिए जिससे यह ज्ञात हो सके कि कुरूपता का कारण कहीं अंतःस्रावी (Endocrine) ग्रन्थियों की विकृति तो नहीं है, उदाहरण के लिये अधिबृक्क ग्रन्थि (Suprarenal gland) की क्रिया हीनता से त्वचा में काली झाइयां एवं बालों का गिरना प्रारम्भ हो जाता है।

अतः हमारे बालों का सुन्दर होना हमारे स्वास्थ्य पर निर्भर करता है।

हमारे स्वास्थ्य का त्वचा से सम्बन्ध–

हमारे स्वास्थ्य का त्वचा से सीधा सम्बन्ध है यदि हम स्वस्थ है तो त्वचा भी स्वस्थ व चमकदार रहती है। अगर हमारा स्वास्थ्य ठीक नहीं है तो इसका हमारी त्वचा पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

त्वचा चाहे किसी भी रंग की क्यों न हो उसकी ताजगी और मृदुता हर उम्र में प्रिय है और त्वचा की शुष्कता उसे रूग्ण होने का संकेत करती है।

त्वचा को स्वस्थ रखने के लिये निम्न तीन बातें आधारभूत रूप में अपेक्षित है।

1. समुचित स्वास्थ्य वर्धक आहार।

2. त्वचा की नियमित देखभाल

3. उचित व्यायाम

स्वास्थ्य वर्धक आहार से तात्पर्य है ऐसे आहार से जिसमें खनिज लवण तथा विटामिन पर्याप्त मात्रा में हो तथा कैलोरी भी व्यक्ति की आवश्यकता के अनुरूप हो। अतः स्पष्ट है कि हल्की पकी ताजी मौसमी तरकारियां ताजे फल तथा हरी पत्तियां जैसे पालक सलाद आदि त्वचा के स्वास्थ्य संवर्धन में बड़े सहायक होगे। इनके साथ दूध पनीर और प्रोटीन युक्त पदार्थ भी आवश्यक। प्रत्येक दिन प्रातः काल गर्म जल में नीबूं निचोड़ कर पीने से भी त्वचा स्वस्थ होती है।

भोजन के सम्बन्ध में ध्यान में रखने की एक है कि अधिक तली भुनी, मिर्च मसालों वाली और अपेक्षा से अधिक उबाले गये खाद्य पदार्थों में स्वास्थ्य रक्षा अथवा स्वास्थ्य वर्धक गुण समाप्त हो जाते है। गुड़ चीनी से बने अत्यधिक कैलोरीयुक्त खाद्य पदार्थ यथा चौकलेट, शीतलपेय आदि भी स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।

सदा ध्यान में रखने की बात है यह कि त्वचा जीवित कोशिकाओं की संरचना है। उसका यौवनमय विन्यास बना रहे इसके लिये त्वचा को समुचित पोषण की अपेक्षा होती है। कांतिमय त्वचा पाने के लिए संतुलित आहार, फाइबर, फल व सब्जियां बहुत जरूरी है प्रति दिन 6–8 गिलास पानी जरूर पीना चाहिय। तरल पेयों में दूध, मट्ठा, नींबूपानी, फलों का रस उत्तम है तथा तरल खाद्य पदार्थों में शहद, दही, खिचड़ी, दलिया, सत्तू आदि लेने चाहिए ये पर्याप्त कैलोरी प्रदान करने के साथ –साथ सुपाच्य हैं तथा पौष्टिक भी।

त्वचा की सफाई –

त्वचा से स्रवित होने वाला तैलीय पदार्थ एवं पसीना आदि बाहर की हवा के सम्पर्क में आकर एक प्रकार की झिल्ली का रूप धारण कर लेती है। इनसे त्वचा

को साफ रखना चाहिये। स्नान के पूर्व नित्य सारे बदन को मोटे तौलिये से भली–भांति रगडे। इससे यह कृत्रिम झिल्ली साफ हो जायेगी और रक्त प्रवाह त्वचा की उपरी सतह तक आकार कोषाओं को नये प्राण देगा इससे समस्त रोम कूप खुल जायेंगे और त्वचा स्वस्थ होगी।

अस्वस्थ त्वचा के लिये ये सौंदर्य प्रसाधन किसी के काम के नहीं। ये त्वचा को रूग्ण से रूग्णतर ही बनाते चले जाते है।

त्वचा की देखभाल का एक महत्वपूर्ण पहलू है नियमित रूप से आपके शरीर से टाक्सिन का निकल जाना हानिकारक टाक्सिन की वजह से चेहरे का रंग फीका पड़ जाता है। आंखों के नीचे गड्ढे व चेहरे पर झाइयां हो जाती है। कब्ज की शिकायत हो तो सुबह उठ कर नीबू पानी पिये। दिन में कम से कम 8–10 गिलास पानी पीना चाहिये ताकि शरीर के अन्दर के विजातिय द्रव मूत्र के रास्ते शरीर से निकलते रहे और त्वचा कांतिमय दिखती रहें। इसके अतिरिक्त त्वचा की रोज क्लीजिंग में सफाई करनी चाहिये। क्लीजिंग में त्वचा के छिद्र और पुराना मेकअप साफ हो जाता है। त्वचा में नई जान आ जाती है।

क्लीजिंग के बाद त्वचा की टोनिंग व माइस्चराइजिंग की जरूरत पड़ती है। इसमें त्वचा की नमी बनी रहती है।

नींद –

त्वचा के स्वास्थ्य के लिये तीसरी अपेक्षित वस्तु है। आठ घंटे की पूरी नींद। नींद त्वचा के रंघ्रो में ताजगी ला देती है। यहां एक बात और ध्यान में रखने की यह कि शुद्ध और सात्विक विचार भी बहुत हद तक सौंदर्य प्रदान करने में सहायक होते हैं।

जितने ही विचार शुद्ध और सात्विक होगे, उतना ही व्यक्ति का चेहरा साफ और आकर्षक होगा।

त्वचा की ताजगी के लिये गहरी निद्रा वास्तव में जरूरी है रोजना 8–10 घंटे सोना जरूरी है।

एड्स टु हेल्थी स्किन–

स्वस्थ त्वचा आनन्द को बढ़ाने वाली होती है। न केवल जिस मनुष्य की हो बल्कि जो भी व्यक्ति इसे देखता है आनन्द की अभिभूति करता है। स्वस्थ त्वचा न केवल मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है बल्कि मनुष्य को अनेक प्रकार के सामाजिक एवं आर्थिक लाभ भी पहुंचाती है।

त्वचा को स्वस्थ एवं स्वच्छ रखने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- **आहार** :– सदा सन्तुलित एवं सुपाच्य भोजन का प्रयोग करें। भोजन में विटामिन एवं प्रोटीन का ध्यान रखें। भोजन में दूध, हरीसब्जी एवं दालों का सेवन करें।
- **ताजी ठण्डी हवा** :– ताजी ठण्डी हवा त्वचा के लिए बहुत लाभदायक है। अतः अधिक से अधिक कोशिश करके ताजी ठण्डी हवा में सम्पर्क में रहना चाहिए। इसके लिए सुबह की सैर सर्वोतम है। क्योंकि सुबह–सुबह की हवा दिन की अपेक्षा अधिक ठण्डी और ताजी होती होती है।
- **नियमित व्यायामः**– नियमित व्यायाम करने से भी त्वचा स्वच्छ और स्वस्थ रहती है। तथा त्वचा की कांति बढ़ती है।
- **स्नान** :– रोजाना स्वच्छ ताजे जल से स्नान करने से भी त्वचा चमकदार स्वच्छ एवं कांतिमान होती है।

अभ्यास

प्रश्न 1. हमारे स्वास्थ का त्वचा से क्या सम्बन्ध है।

प्रश्न 2. त्वचा की देखभाल किस प्रकार की जा सकती है।

इकाई – 4

अभ्यंग का महत्व

प्रस्तावना –

सौन्दर्यवर्धन एवं चिकित्सा में अभ्यंग का विशेष स्थान है, अभ्यंग आज के परिवेश में स्वास्थ्य लाभ हेतु की जाने वाली सर्वाधिक प्रचलित क्रिया है। स्वस्थ व्यक्तियों में स्वास्थ्य रक्षण हेतु यह क्रिया प्रति दिन प्रशस्त है तथा शरीर को स्थिरता प्रदान करती है। विभिन्न रोगों की पंचर्कम द्वारा चिकित्सा में यह पूर्व कर्म के रूप में प्रयुक्त होता है। इस इकाई में विद्यार्थी अभ्यंग के अन्तर्गत निम्न विषयों का अध्ययन करेंगे।

- अभ्यंग का इतिहास
- मर्म का संक्षिप्त विवरण (चित्र सहित)
- अभ्यंगादि के प्रकार
- अभ्यंग काल
- अभ्यंग के गुण व लाभ

- प्रकृति अनुसार अभ्यंग
- प्रकृति अनुसार अभ्यंग हेतु तेल निर्माण की विधि का संक्षिप्त वर्णन
- अभ्यंग में सहलाने व थपथपाने के प्रकार व विधि (चित्र सहित)
- शारीरिक सौन्दर्य हेतु अभ्यंग (चित्र सहित)

इतिहास

अभ्यंग प्राचीन युग से अनेकों देशों में प्रयोग किया जाता है तथा इस शब्द का उल्लेख विभिन्न सभ्यताओं में मिलता है। अभ्यंग का अर्थ है शरीर पर तैल आदि लगाना वस्तुतः वाह्य स्नेहन में प्रयुक्त लेप, उद्वर्तन, र्मदन आदि विधि में कुछ फरक से अभ्यंग ही किया जाता है।

अगं धातु गति के अर्थ में प्रस्तुत है उसमें अभि उपसर्ग से अभ्यंग शब्द बनता है।इसका शब्द अर्थ होगा कुछ गतियां करना।वसा तैल व मृतादि तैलों को शरीर पर रगड़ कर हाथ से उन स्नेहों को भली प्रकार शोष्णार्थ गतियां ही की जाती है। मर्म स्थानों पर अभ्यंग का उल्लेख सरस्वती तथा इन्द्रस घाटी सभ्यता में भी मिलता है। मर्म मसाज आयुर्वेद की अपनी विशिष्टता है।

मोहिन्जोदारों तथा हडप्पा की खुदाइयों से प्राप्त पाण्डुलिपियों से यह ज्ञात हुआ है कि पूर्व काल में मर्म स्थानों की रक्षा हेतु विभिन्न कवच तथा शस्त्रो का प्रयोग होता था। वृहतत्रयी तथा भाव प्रकाश में अभ्यंग की तकनीक का उल्लेख वृहत रूप से किया गया है। अभ्यंग में मर्म का ज्ञान अति आवश्यक हैं क्योंकि यह शरीर के वह स्थान हैं जहॉ अधिक स्पन्दन अथवा दबाने से असहनीय पीड़ा होती है

इन स्थानों पर असावधानीपूर्वक अभ्यंग करने से हानि भी हो सकती है अतः यहॉ मर्म का संक्षिप्त विवरण करना आवश्यक है।

मर्म

शरीर के जिस भाग में विषम (असाधारण) स्पन्दन एवं दबाने से असहनीय पीड़ा होती है उसे मर्म कहते है ।

''**मर्म मारयन्तिति मर्माणि**'' – मरणकारी होने से मर्म कहे जाते हैं।

शरीर के जिन स्थानों पर अभिघात से अधिक कष्ट हो उसे मर्म कहते है। 107 मर्म होते है –

दाहिने पैर में	11
बायें पैर में	11
बायें हाथ में	11
दायें हाथ में	11
कोष्ठ	3
छाती	9
पीठ	14
जत्रु से उपर	37
योग	**107**

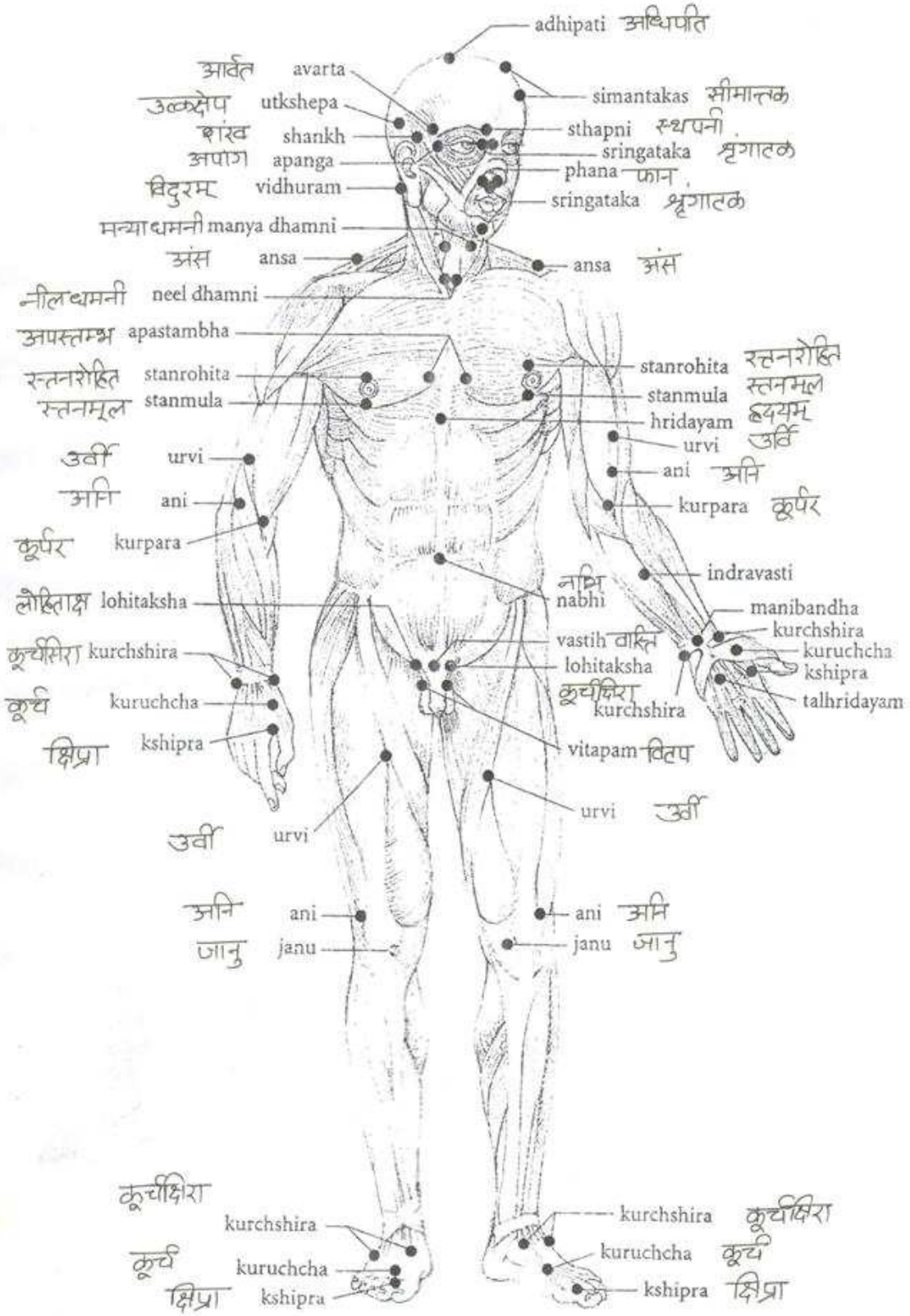

adhipati अधिपति
आवर्त avarta
simantakas सीमान्तक
उत्क्षेप utkshepa
शंख shankh
sthapni स्थपनी
अपांग apanga
sringataka श्रृंगाटक
phana फान
विदुरम vidhuram
sringataka श्रृंगाटक
मन्या धमनी manya dhamni
अंस ansa
ansa अंस
नील धमनी neel dhamni
अपस्तम्भ apastambha
स्तनरोहित stanrohita
stanrohita स्तनरोहित
स्तनमूल stanmula
stanmula स्तनमूल
hridayam हृदयम
urvi उर्वि
उर्वी urvi
ani अनि
अनि ani
kurpara कूर्पर
कूर्पर kurpara
indravasti
नाभि nabhi
लोहिताक्ष lohitaksha
manibandha
kurchshira
vastih वास्ति
kuruchcha
कूर्चशिरा kurchshira
lohitaksha
kshipra
कूर्च kuruchcha
कूर्चशिरा kurchshira
talhridayam
क्षिप्रा kshipra
vitapam वितप
urvi उर्वी
उर्वी urvi
अनि ani
ani अनि
जानु janu
janu जानु
कूर्चशिरा
kurchshira
kurchshira कूर्चशिरा
कूर्च kuruchcha
kuruchcha कूर्च
क्षिप्रा kshipra
kshipra क्षिप्रा

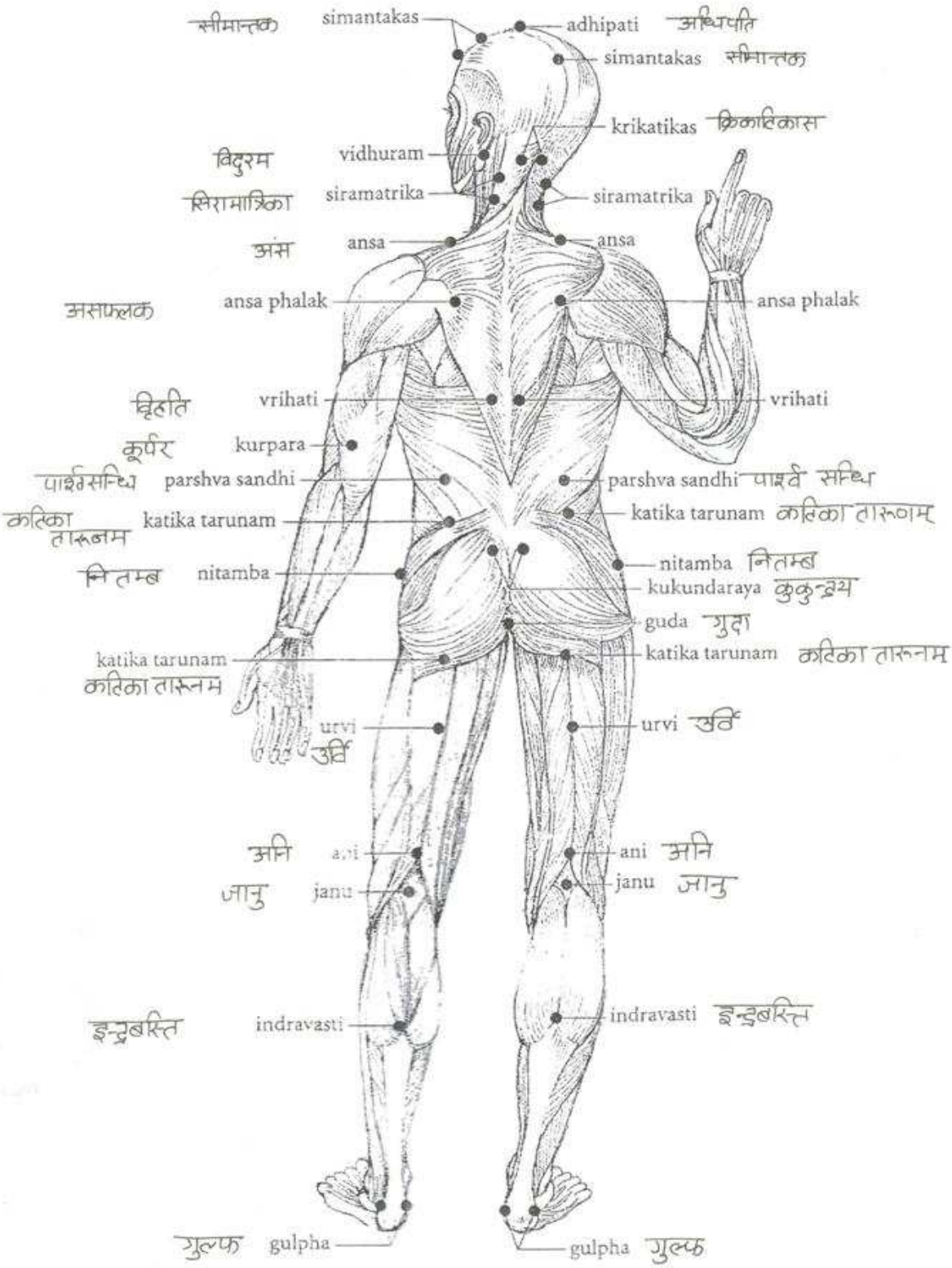
सीमान्तक
simantakas
adhipati
अधिपति
simantakas
सीमान्तक
krikatikas
क्रिकाटिकास
विदुरम
vidhuram
सिरामात्रिका
siramatrika
siramatrika
अंस
ansa
ansa
असफलक
ansa phalak
ansa phalak
वृहति
vrihati
vrihati
कूर्पर
kurpara
पार्श्वसन्धि
parshva sandhi
parshva sandhi पार्श्व सन्धि
कटिका तारूनम
katika tarunam
katika tarunam कटिका तारूणम्
नितम्ब
nitamba
nitamba नितम्ब
kukundaraya कुकुन्द्रय
guda गुदा
katika tarunam
कटिका तारूनम
katika tarunam
katika tarunam कटिका तारूनम
urvi
उर्वि
urvi उर्वि
अनि
ani
ani अनि
जानु
janu
janu जानु
इन्द्रबस्ति
indravasti
indravasti इन्द्रबस्ति
गुल्फ
gulpha
gulpha गुल्फ

पैर के मर्म–

पैर की तलुवे बीच ये मध्यमा उगली के सामेन तल हृदय मर्म होता है।

- अगुठे एवं अंगुली के बीच – क्षिप्रमर्म
- क्षिप्र से दो अंगुल ऊपर कूर्चमर्म
- गुल्फ सन्धि के बीच में कूर्चशिरमर्म
- जघां एवं पैर के जोड़ पर (घुटने पर) – गुल्फ/मणिवन्धमर्म
- जंघा के बीच में – इन्द्रबंस्ति मर्म
- जघां एवं उरू सन्धि के बीच में – जानु (कूर्पर मर्म)
- जानु के तीन अगुंल ऊपर – आणी मर्म
- उरू के मध्य – उर्वी मर्म
- उरू के मूल – लोहिताक्ष मर्म
- मुष्क एवं वंक्षण के बीच विटप मर्म

कोष्ट मर्म

- **गुद मर्म** :–वायु को बाहर करता है सद्य मर्म प्राण हर है । गुदा को ही मर्म गुद कहते हैं।
- **वस्ति मर्म**– मूत्र के आधार मूत्राशय धनुश के समान टेढ़ा, इसे ही वस्ति कहते है।

- **नाभि मर्म** :–पक्वाशय, आमाशय के बीच सब शिराओं का आश्रय, नाभि मर्म है।

उरोगत मर्म –

- **हृदय मर्म** :–उरकोष्ट के मध्य होता है ।
- **स्तन रोहित मर्म** :–स्तनों से दो अंगुल ऊपर दो मर्म होते हैं जिन्हें स्तन रोहित मर्म कहते हैं।
- **स्तन मूल**:–स्तनों से नीचे दो मर्म दो होते हैं जिन्हें स्तनमूल मर्म कहते हैं।

उपस्तम्भ मर्म :–

छाती के पार्श्व में वायु को ले जानी वाली दो नाड़िया हैं जिन्हें उपस्तम्भ मर्म कहते हैं।

अपलाप मर्म :–

पृष्ठ वंश एवं छाती के बीच में होता है। पृश्ठवंश के चार मर्म नितम्ब के ठीक ऊपर –2 मर्म, जिन्हें कटिकल सण मर्म कहते हैं।

कुकुन्दर मर्म :–पृष्टवंश के दोनो और कटिपार्श्व में दो सन्धियां जंघा के वहिर भाग में रहती है। 2– मर्म।

1:–नितम्ब मर्मः–मूत्राशय आदि का ढकने वाले –2 मर्म।

2:–पार्श्व सन्धि मर्मः–पार्श्व, जघन मर्म

वृहती मर्म – पृष्ठवंश में –2 मर्म।

अंसफलक मर्म – वाहुमूल में 2 मर्म होते हैं।

अंस मर्म –ग्रीवा, बाहु, सिर –2 ग्रीवा, बाहु एवं शिर में

नीला, मन्या मर्म – कण्ठ नाड़ी के दोनों और 2+2=4

मातृका –कण्ठ नाडी से जिह्वा नासा में –2 मर्म

कृकटिका – सिर एवं ग्रीवा सिन्धयों के –2 मर्म

विधुर – कान के नीचे देव स्थान –2 मर्म

फण मर्म – नासिका मार्ग से श्रोत्र के –2 मर्म

अपांग मर्म – नेत्रों के बाहर – 2 मर्म

शंख मर्म – कान के बगल –2 मर्म

उत्पेक्ष मर्म – बालों के किनारे के पास

श्रृंगाटक मर्म – जिहवा, आंख, श्रोत, नासिका –4

सीमन्त मर्म – पांच सन्धियों (शिर में)

अधिपति मर्म – मस्तिष्क के भीतर सिरा + सन्धि के पास

अभ्यंगादि के प्रकार

अभ्यंगादि का बाह्म स्नेहन में समावेश किया गया है। बाह्म स्नेहन के निम्न लिखित प्रकार आयुर्वेद शास्त्र में वर्णित है।

1. अभ्यंग 2. लेप 3. उद्वर्तन 4. उत्सादन या मर्दन अथवा उन्र्मदन 5. पादाघात 6. परिषेक 7. सवांहन 8. गंडूष 9. मूर्धतैल –शिरस्तर्पण 10. अक्षितर्पण 11. नासातर्पण 12. कर्णपूरण 13. मस्तिष्क्य 14. स्नेहावगाहन

अभ्यंग के महत्व का वर्णन आगे किया जायेगा पहले संक्षेप में हम विभिन्न बाह्म स्नेहन के बारे में समझ लें।

लेप– किसी औषधि का शरीर के अवयव पर लेपन करना लेप कहलाता है। यह प्रलेप, प्रदेह और आलेप ऐसे तीन प्रकार का होता है। स्नेह द्रव्यों से लेपन के अनेक प्रयोजन है। लेप अभ्यंग से कम गुण वाला होता है। इसमें दबाना, भार देना, गति करना यह क्रियाऐं नहीं है। केवल विशिष्ट समय तक गात्र (शरीर) को स्नेहन से युक्त रखना इसका प्रयोजन है। स्नेह प्रलेप अविशोषी (नसोखने वाला) होता है। प्रदेह उष्ण या शीत और अविशोषी होता है। प्रलेप शीतल पतला तथा शोषी या अविशोषी होता है। आलेप मध्यम होता है।

उद्वर्वतन–उत्सादन – प्रतिलोम गति से कुछ अधिक भार या पीड़न के साथ अभ्यंग करना उद्वर्तन है। ग्रन्थों में चूर्ण उद्वर्तन का उल्लेख किया गया है।

यह स्निग्ध एवं रूक्ष दो प्रकार का होता है। महर्षि चरक ने स्थौल्य चिकित्सा में उद्वर्वतन और कृशों की चिकित्सा में स्निग्ध उद्वर्वतन करने का निर्देश किया है। उत्सादन और उद्वर्वतन में अन्तर प्रतीत नहीं होता उद्वर्वतन और उतसादन के द्वारा सिरा मुखों का विकास होता है। त्वचा की अग्नि का दीपन होता है जिससे वर्ण प्रसादन होता है। अतएव विशेषतः स्त्रियों में सौन्दर्य बढाने के लिये उत्सादन का उपयोग प्रशस्त है। अन्य गुण इस प्रकार है।

यह कफ का शमन कर मेद का विलयन करता है। शरीर के अवयव स्थिर और दृढ होते हैं, त्वचा का प्रसादन होता है, स्वेद से उत्पन्न दुर्गन्ध दूर होती है।

मर्दन–उन्मर्दन – मर्दन उसे कहते हैं जिसमें शरीर पर तैल लगाकर जोर से पीडन किया जाता है। अष्टांग हृदय में तैल अभ्यंग के बाद मर्दन करने का निर्देश दिया गया है। दिनचर्या के क्रम में अभ्यंग फिर व्यायाम कर तत्पश्चात यथा सुखपूर्वक शरीर को धीरे–धीरे दबाना हितकर है। मर्दन का अर्थ है गात्र को धीरे–धीरे नीचे

की ओर से दबाना और उन्मर्दन इसके विपरीत नीचे दबाते हुए नीचे से ऊपर की ओर जाना। प्रायः मर्दन करते समय उन्मर्दन होता ही है। स्नेह द्रव्यों को सुखोष्ण कर मर्दन और उर्न्मद करें। यह पेशीय थकावट व स्नायुशूल को कम करती है और शरीर में लघुता लाती है।

पादाघात – पदाघात का अर्थ है पांव के द्वारा दबाना या पीडन करना। मर्दन से भी अधिक पीड़न पादाघात से होता है। वाग्भट्ट ने पादाघात का वर्णन ऋतुचर्या में किया है। इसमें हेमन्त ऋतु में किसी वातनाशक तेल को शरीर पर लगावें शिर पर तेल का अभ्यंग करें फिर तेल से शरीर का मर्दन कर पांव के द्वारा शरीर पर पीडन कराते है। इससे शरीर दृढ होता है। पादाघात करने वाले के पांव मुलायम स्वच्छ बिना फटे हो एवं वह सामान्य वजन का हो। पादाघात कर्म हेतु शयन स्थान के उपर एक श्रृंखला बांधकर उसमें चक्र लगाकर रखें जिसे पकड़ कर परिचारक कर्मचारी स्वस्थ अथवा रोगी शरीर के अवयव पर पर सुखपूर्वक पादाघात करे।

परिषेक – औषधि, क्वाथ, दूध, तेल, घी, तक्र, मांस रस आदि द्रव्यों की आतुर के शरीर पर धारा छोडना परिषेक है। इससे थकावट दूर होती है। और वात का शमन होता है।महर्षि सुश्रुत के अनुसार जैसे जल सींचने पर वृक्षों के मूलों से अंकुरों की वृद्वि होती है वैसे ही स्नेहन द्रव्यों के परिषेक से धातु वृद्वि होती है।

संवाहन – संवाहन सुखपूर्वक स्पर्श को कहते है। हाथ से धीरे–धीरे अधिक बल प्रयोग न करते हुये जिसमे केवल सुखअनुभूति हो उतने प्रमाण में स्नेहों को शरीर पर मलना स्नेह संवाहन है। संवाहन बिना स्नेह के भी किया जा सकता है इसमें स्नेह के बिना ही हाथों से रोगी शरीर को कम दाब के साथ मलना चाहिए। इससे नींद अच्छी आती है मांस रक्त और त्वचा को संवाहन प्रसन्न रखता है।

गंडूष – औषधीय द्रव्यों से निर्मित क्वाथ या द्रव को मुख में धारण करने को गंडूष कहते है। यह स्नेह द्रव्यों से किया जाये तो स्नेह गंडूष कहलाता है। गण्डूष धारण करने से स्वर घोषवान और प्रसादयुक्त होता है, ओठ कभी नहीं फटते, गला नही सूखता, और दांत मजबूत होते हैं।

मूर्धतेल – सिर पर तेल को विशिष्ट समय तक धारण करना मूर्धतेल कहलाता है। वाग्भट्ट के अनुसार मूर्धतेल चार प्रकार का होता है।

1 – शिरोभ्यंग 2 – शिरःसेक

3 – पिच्चुधारण 4 – शिरोवस्ति

शिरोभ्यंग – हाथों के द्वारा सिर पर तेल को मलना शिरोभ्यंग है। प्रायः सर्वाभ्यंग में भी सिर से ही अभ्यंग प्रारम्भ किया जाता है। इसका वर्णन आगे किया जायेगा।

शिरः सेक – शिर पर विशेषतः कपाल प्रदेश पर औषधि क्वाथ, दूध, छाछ, इक्षुरस, घी, तेल इत्यादि से विशिष्ट प्रकार से धारा छोडना शिरः सेक कहलाता है। इसे शिरोधारा भी कहते है। इसका प्रयोग सिर में उत्पन्न होने वाली पिडकाए शिर में सुई चुभाने की सी वेदना दाह, शिरःभूल तनाव पालित्य एवं खालित्य में किया जाता है।

शिरः पिच्चुधारण – कार्पास खंड या तैलयुक्त या घृत युक्त कंवलिका को शिर पर रखना पिच्चुधारण कहलाता है। सिर के बाल गिरना,सिर की त्वचा का फटना सिर के बाल पकना,व्रण में तथा नेत्रस्तंभ में पिचु रखना चाहिए।

शिरोबस्ति – सिर पर तैल धारण करने का चौथा प्रकार शिरोबस्ति है। इसमें तैल धारण करने के लिये प्राणियो के चर्म से बनाये हुए शिरोबस्ति यंत्र का प्रयोग किया

जाता है। यह उल्टी टोपी सदृश्य होता है, जिसके अन्दर औषधीय तैल या क्वाथ भर दिया जाता है।

अभ्यंग काल – अभ्यंग काल के बारे में आचार्य डल्हण ने कहा है तीन सौ मात्रा तक अभ्यंग करने से (1 मात्रा बराबर 19/60 सेकेण्ड अतः लगभग पिच्चान्नवे सैकेण्ड या डेढ़ मिनट) स्नेह त्वचा के रोमान्त में पहुंच जाता है। 400 मात्रातक अर्थात लगभग 133 सैकेण्ड करने से त्वचा में पहुंच जाता है। पांच सौ मात्रा लगभग 160 सैकेण्ड में स्नेह रक्त में पहुंचता है। 600 मात्रा (लगभग 190 सेकण्ड) तक करने से मांस में पहुंचता है। 700 (228 सेकण्ड) मात्रा तक अभ्यंग करने से मेद में पहुंच जाता है। 800 (लगभग 240 सेकण्ड) मात्रा तक करने से अस्थि में पहुंच जाता है (900 मात्रा लगभग 205 सेकण्ड) मज्जा में इस क्रम से अभ्यंग में कुल पांच मिनट लगते हैं। अतः सम्पूर्ण शरीर में 2 मिनट से पांचमिनट तक अभ्यंग करें। इसतरह कुल पन्द्रह मिनट से पैन्तिस मिनट तक अभ्यंग करना हितकर है। यदि एकांग पर जैसे हाथ पांव,सिर आदि पर भी अभ्यंग करना हो तो कम से कम पन्द्रह मिनट तक अवश्य करना चाहिए पांच मिनट का यह क्रम प्रतिदिन स्नानादि से पूर्व स्वस्थ व्यक्तियों में अभ्यंग के लिए अनुकूल है। रोगावस्था में इससे अधिक काल तक चिकित्सक की देख रेख में कर सकते है।

अभ्यंग के बाद पन्द्रह मिनट तक विश्राम करें फिर नेपकिन या गर्म तौलिया से पोछकर, उष्ण जल से स्नान करना चाहिए। स्नान के लिए चन्ने के आटे का प्रयोग करना चाहिए। साबुन से श्रोतोमुख में प्रविष्ट तेल भी घुल जाने की संभावना होती है।

अभ्यंग के गुण व लाभ – महर्षि चरक के अनुसार स्पर्शइन्दिय्र में वायु रहता है। स्पर्शेइन्द्रि का अधिष्ठान त्वचा है। अभ्यंग से वायु का शमन होता हैं अतः अभ्यंग

त्वचा के लिये हितकर है। जिस तरह से चमडे को स्नेह लगाने से वह दृढ होता है, और रथ या गाड़ी चक्र में स्नेह लगाने से वह मजबूत होता है, वैसी ही अभ्यंग करने से मनुष्य का शरीर दृढ़ होता है।

तेल अथवा अन्य द्रव्यों के कल्क द्वारा निर्मित औषध त्वचा पर अभ्यंग करने पर वह त्वचा द्वारा प्रवेश करती है तथा अन्य धातुओं को पुष्ट करती हैं। अभ्यंग के उपरांत उदर्वतन तथा फिर स्वेदन करने से श्रोतों में स्थित अवरोध हटते है। तथा त्वचा स्वच्छ होती है।

अभ्यंग तथा मर्दन द्वारा त्वचा में जरा (वृद्वावस्था) द्वारा उत्पन्न सिकुड़न (झुर्रियां) भी दूर होती है। त्वचा में रक्त संचार भली प्रकार होने से रक्त लसीका वाहिनियों द्वारा विभिन्न निरर्थक द्रव्यों का निष्कासन होता है।

सहस्त्रों रन्ध्रों को अभ्यंग स्वच्छ रखने में सहायता प्रदान करता है। त्वचा की बाह्म सतह पर स्थित मृत काशिकाओ को हटाने में अभ्यंग की महत्वपूर्ण भूमिका है, यह त्वचा का लचीलापन भी बढ़ाता है।

इस प्रकार अभ्यंग के निम्न गुण है।

जराहर – नित्य अभ्यंग से बुढ़ापा देरी से आता है। धातुओं को बल प्रदान करने से यह गुण मिलता है।

श्रमहर – अधिक काम,व्यायामादि से मांसपेशियों मे उत्पन्न होने वाली थकावट दूर होती है।

वातहर – स्नेह गुणों से यह वात दोष का शमन करता है।

दृष्टिप्रसादकर – आंखों की रोशनी बढ़ाकर शरीर को पुष्ट करती है।

त्वक दृढ़िकर – त्वचा को कोमल तथा दृढ़ बनाता हैं।

स्वप्नकर – अभ्यंग से अच्छी तरह नींद आती है।

क्लेश सहत्व – अभ्यंग से दृढ़ शरीर अनेक कष्टों को सहन करने में समर्थ होता है।

अभिघात सहत्व – नित्य अभ्यंग करनेवलो को अभिघात आदि से कोई विशेष कष्ट नहीं होती है।

कफवात निरोधक–महर्षि सुश्रुत ने अभ्यंग को कफ वात दोनो को कम करने वाला बाताया है।

मज्जावर्ण बलप्रद – अभ्यंग से त्वचा शुद्व होती है मुनुष्य का रंग निखर उठता है। और बल बढता है। **अभ्यंग के लिये अयोग्य** – जिन्हे वमन या विरेचन किया गया हो जो आम से पीड़ित हों। तरूण ज्वर से पीड़ित हो उन्हें अभ्यंग न करें।

अभ्यंग का चिकित्सा में उपयोग – पंचकर्म में पूर्वकर्म के रूप में तथा सामान्य जोडों के दर्द में, तंत्रिका दोषों में, स्त्रीरोगो जैसे कष्टार्तव, स्त्री प्रसाधन, पक्षघात (लकवा) सीजोफ्रेनिया, अवसाद, अनिद्रा, अर्धागवात, शिरःशूल, बाल पक्षवध, सियाटिका, उदरविकार,विबन्ध छोड़कर वैरिकोजवेन्स स्थौल्य,फक्क रोग आदि में अभ्यंग अत्यन्त लाभकारी होता है।

प्रकृति अनुसार अभ्यंग

वातज प्रकृति में अभ्यंग – वातप्रकृति वाले व्यक्ति की त्वचा रूक्ष, मांस पेशी, अपुष्ट तथा उनके शरीर पर पतली सिराये,दिखती है तथा तापमान कम, केश रूक्ष व त्वचा का वर्ण सांवला होता है।

इनमें अभ्यंग स्नान से पूर्व करना चाहिए।यह जोडो के लिये हितकर है। तिल तैल या दशमूल तेल जो वात नाशक दशमूल से सिद्व तैल हो अत्यन्त लाभकारी है। इसके अतिरिक्त जटामंसी, कर्पूर, इत्यादि का प्रयोग करें। अभ्यंग अनुलोम गति (त्वचा रोमों की दिशा में तथा हृदय स्थान से बाहर की दिशा मे) करें।

पितप्रकृति में अभ्यंग – पित प्रकृति वाला व्यक्ति, मध्यम आकार वाला चिकना, लचीली पेशी से युक्त, तैलीय त्वचा वाला होता है। जिसकी त्वचा का तापमान अधिक केश मुलायम व रंग हल्का गुलाबीपन लिये होता है। अतः अभ्यंग हेतु शीत तैल जैसे नारियल, सूरज मुखी के तैलों को एला, चन्दन, मुस्तक नागकेशर, गिलोय, एवं जटामांसी सदृश पित्त शामक द्रव्यों से सिद्ध कर प्रयोग करना चाहिए।

कफप्रकृति में अभ्यंग –

कफप्रकृति का पुरूष छोटे कद का मोटी–मोटी मांसपेशी वाला तैलीय मोटी त्वचा वाला, शान्त, त्वचा शीत, केश मोटे व त्वचा का रंग गोरा होता है। इन व्यक्तियों में श्रोतो के अवरोध दूर करने हेतु अभ्यंग किया जाता है। अतः तैल का प्रयोग न कर उष्ण वीर्य के औषधि के पाउडर बनाकर उनमें बहुत सूक्ष्म मात्रा में तिल अथवा सरसों का तैल डालकर अभ्यंग करें। औषिधि द्रव्यों में वचा, शुण्ठी, का चयन उचित है।कफ मसाज तैल कफप्रधान रोगों मे लाभकारी है। इसमें सैन्धवादि तैल, सहचरदि तैल लाभकारी होते है।

वाता–पित में – वात रोगी से कम तैल का प्रयोग करें।

पित–कफ में – सूरज मुखी तैल लाभकारी है।

वात कफ में – वचा इत्यिादि द्रव्यों के पाउडर में मिश्रित तिल तैल का प्रयोग करें।

अभ्यंग हेतु तैल का निर्माण

संक्षेप में तैल निर्माण विधि का वर्णन किया जा रहा है।

सामाग्री– कल्क एक भाग

तैल – चार भाग

औषधीय कल्क से सोलह गुना जल लेकर उसमें औषधियों को पाक करें जब चौथाई भाग शेष रह जाये तो काढ़े को छान लें फिर उस काढ़े में तैल मिलाकर अग्निपर रखकर पकायें समय समय पर चलाते रहें। जिससे द्रव्य पात्र की सतह में जलकर न चिपके।

खरपाक होने पर इसका प्रयोग करें। तैल निमार्ण में तीन अवस्थायें है।

मृदु–पाक – जब द्रव्य आंच पर जलाने पर चटकने की आवाज के साथ जलें।

मध्यपाक – जब वह अधिक गाढ़ा होजाय तथा जलाने पर बिना चटके जले।

खरपाक – जब एक अलग गन्ध आने लगे तथा द्रव्य तैल में मिल जाय वह खरपाक की स्थिति है।

वत प्रधान व्यक्तियों/रोगियों हेतु तैल निर्माण हेतु औधि द्रव्य –यव, कोलकुलत्थ, विल्व, श्योनाक, गम्भारी, पाटला, अग्निमंथ, शालपर्णी, पृष्णपर्णी, वृहती, कंटकारी, गौक्षुर, मेदा, महामेदा, दारू, मंजिठा, काकोलक्षीरकाकोली, चन्दनतैल, सारिवा, तगर, कुष्ठ, जीवक, ऋषभक, सेन्धव, शिलाजीत, वचा, पुर्ननवां, अश्वगन्धा, विदारी, यष्टीमधु, हरीतकी, अमालकी, विभीतक, माषपर्णी मुग्धपर्णी एलात्वक।

पित्त प्रधान व्यक्तियों/रोगियों हेतु तैल निर्माण हेतु औषधि द्रव्य – एला, कुष्ठ,जटामांषी, तगर, देवदारू, नारियल, गिलोय, सहचर, उशीर चन्दन, मंजिष्ठा, शतावरी, त्रिफला, मधुयष्टि, दुग्ध आदि।

कफ प्रधान व्यक्तियों/रोगियों हेतु तैल निर्माण हेतु औषधि द्रव्य – सहचरबिल्व, श्योनाक, गम्भारी, शालपर्णी, पृश्नपर्णी, वृहती, कंटकारी, गोक्षुर, सतावरी, उशीर, चन्दन, एला, प्रियंगु, शिलाजीत, मंजिष्ठा, देवदारू, क्षीर, तैलतिल।

अभ्यंग में सहलाने या थपथपाने के प्रकार तथा विधि

सूखोष्ण, सुगंधी, वातहर, ऋतु, दोषादि, के अनुकूल तेल लेकर सुखपूर्वक, धीरे–धीरे, अनुलोम गति से शरीर पर मलना अभ्यंग है। अभ्यंग सिर में, पांव में और कान पर (या कर्णपूरण) से विशेषतः करना चाहिए। सिर में अभ्यंग के लिए शीत स्नेह या सुखोष्ण स्नेह का प्रयोग करें। शिर इन्द्रीयों का अधिष्ठान है और प्रधान मर्म है, अतः उसे अधिक उष्णता से बचाना चाहिए। हाथ–पांव इत्यादि भागों पर उष्ण स्नेहों से अभ्यंग करे। इसी तरह शीत ऋतु में उष्ण तेलों से तथा उष्ण ऋतु में शीत तेलों से अभ्यंग करना उचित है। दीघ्रकार वाले अवयवो यथा हाथ, पांव पर अनुलोमतः ऊपर से नीचे की ओर, संधि स्थानों यथा में कूर्पर, असं जानु गुल्फकटी में वर्तुलाकार अभ्यंग करें। अभ्यंग का मुख्य उद्देश्य भीतर के अवयवों की गतियों को उत्तेजित करना है। इसलिय अनुकूल गतियों से अभ्यंग कराये प्रत्येक अवयव का अभ्यंग अच्छी प्रकार से हो।

निम्न सात अवस्थाओं में रखकर आतुर या स्वस्थ का अभ्यंग करना चाहिएः–

1. पांव सीधा रख बैठाकर (**Sitting Position**)

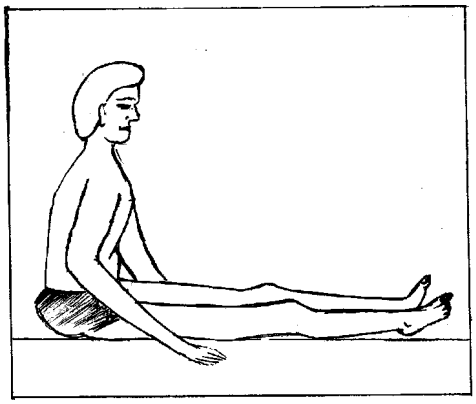

2. पीठ के बल लिटाकर (**Supine Position**)

3. वामपार्श्व पर लिटाकर (**left Lateral**)

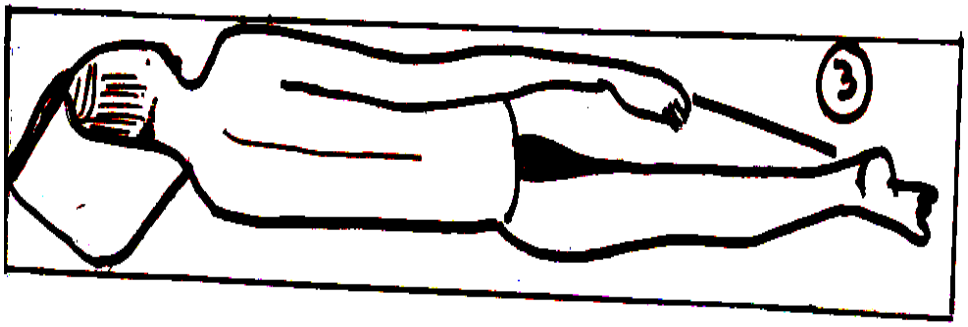

4. वक्ष–उदर के बल पर लिटाकर (**Prone Position**)

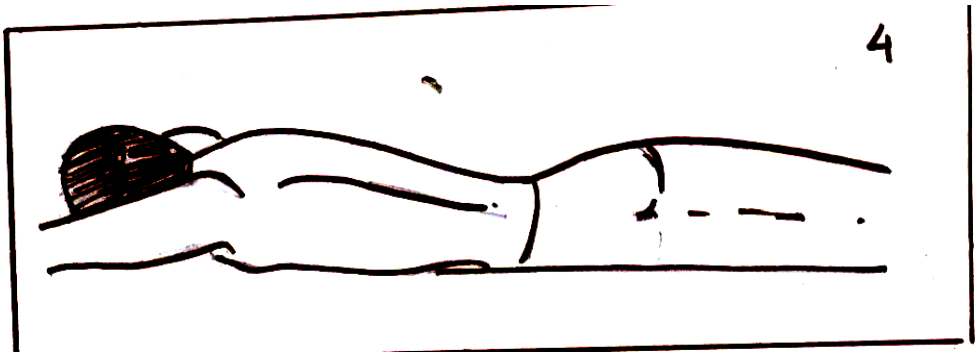

5. दक्षिण पार्श्व पर लिटाकर (**Right Lateral Position**)

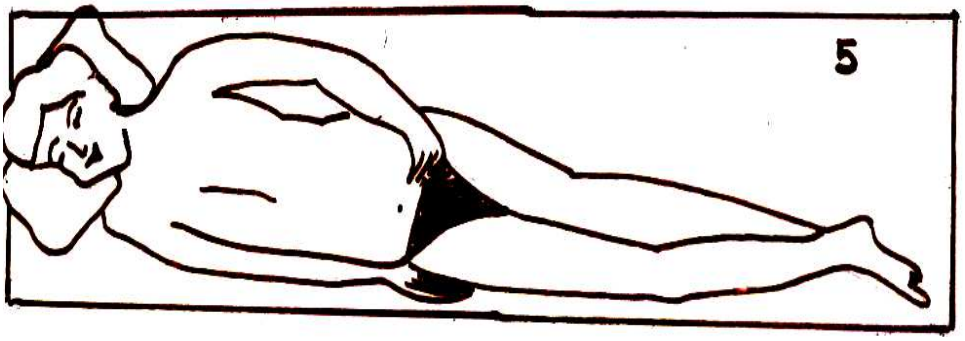

6. पुनः पीठ के बल लिटाकर (**Supine Position**)

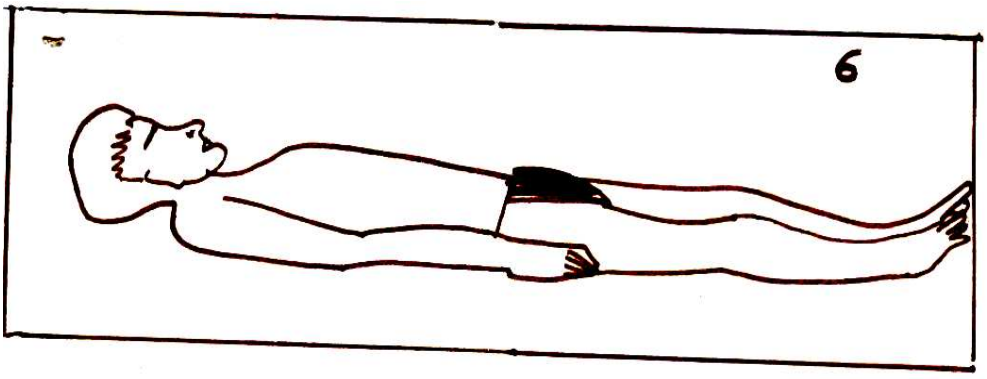

7- पुनः बैठाकर **(Sitting Position)**

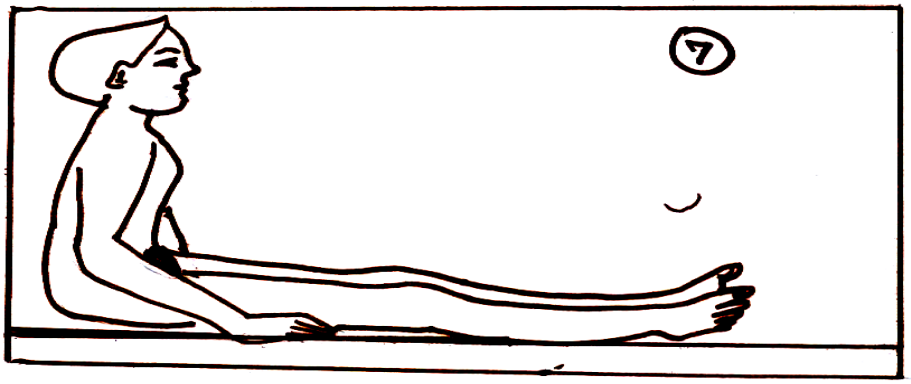

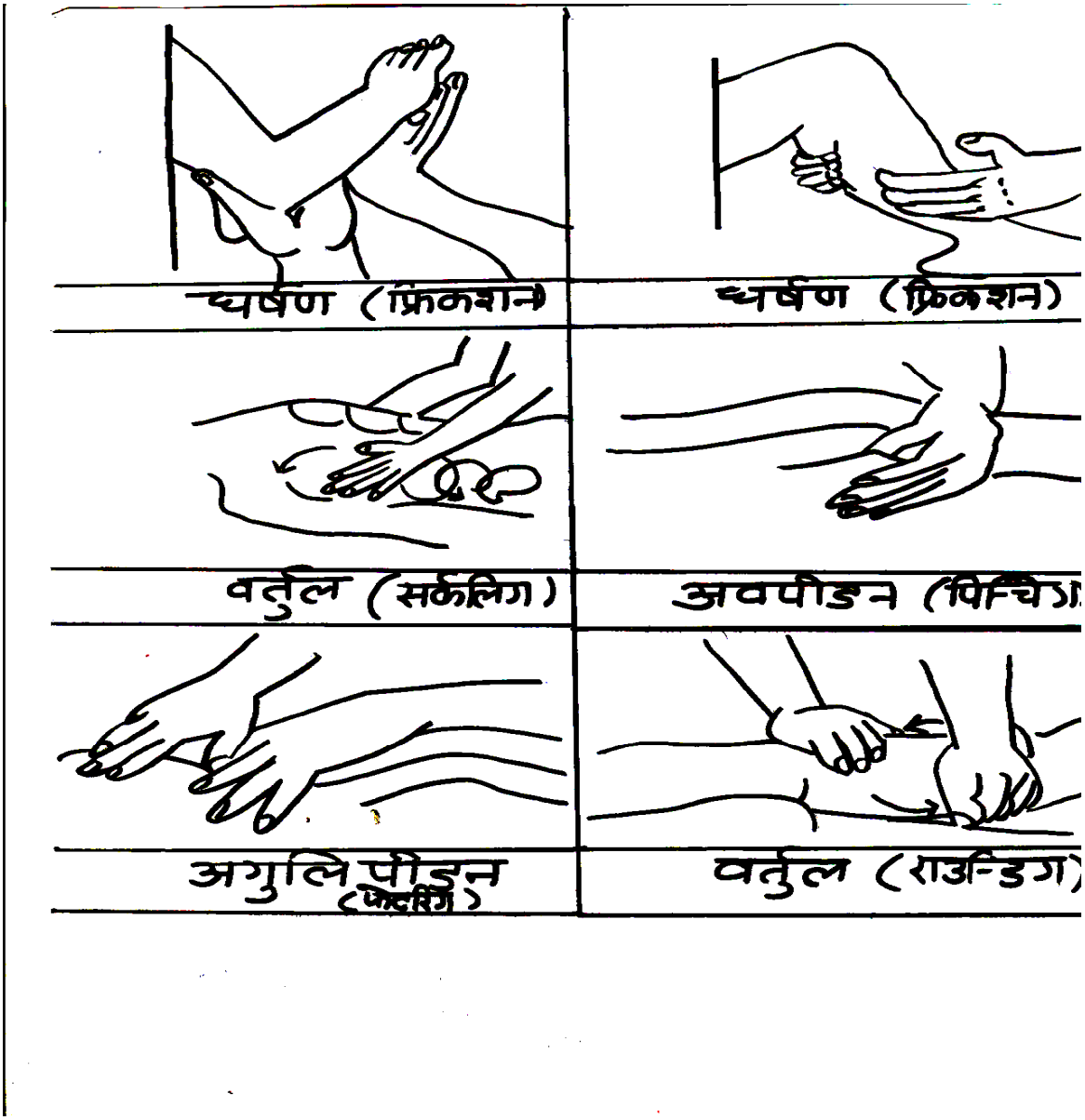

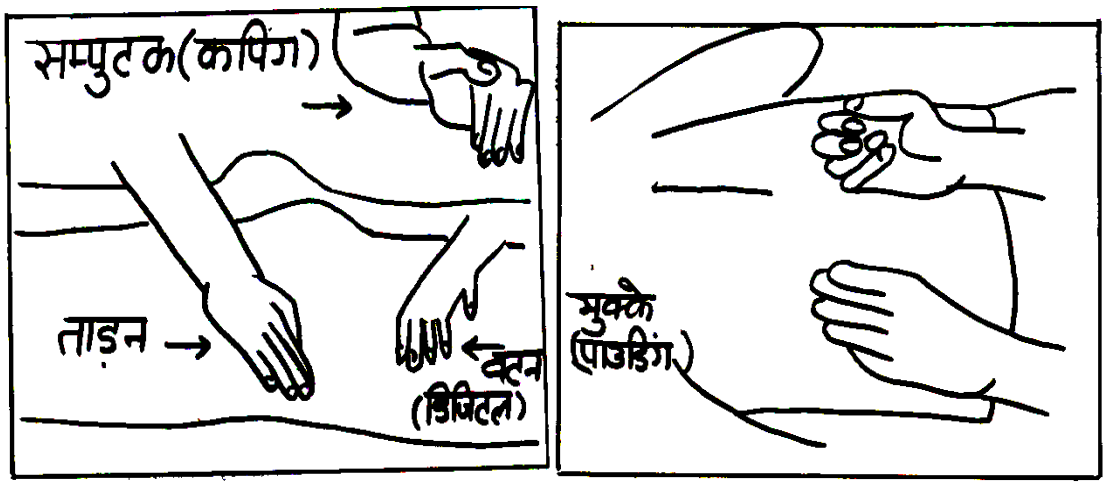

सम्पुटक(कपिंग)
ताड़न
कटन
(डिजिटल)

मुक्के
(पाउडिंग)

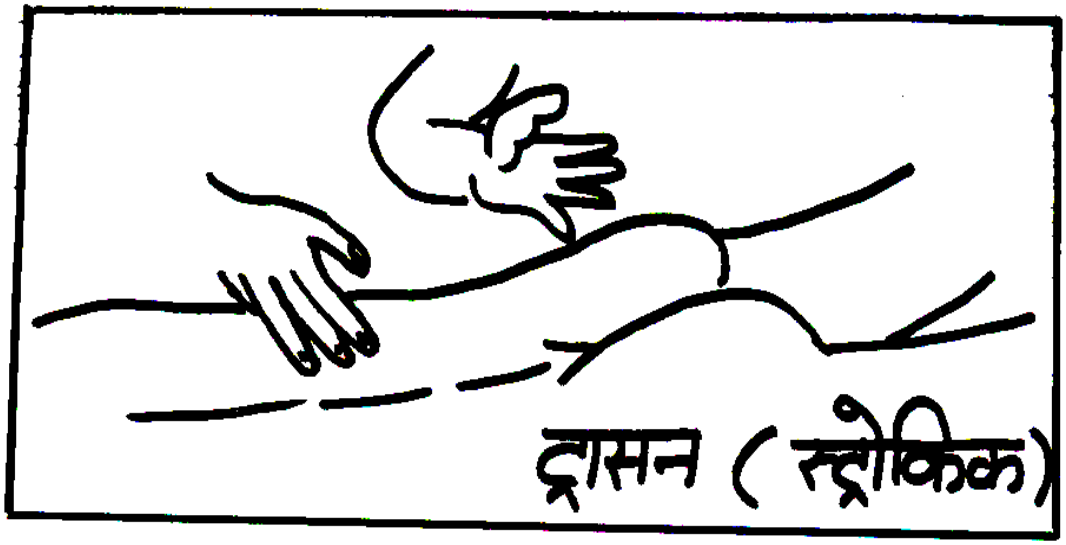

द्रासन (स्ट्रोकिक)

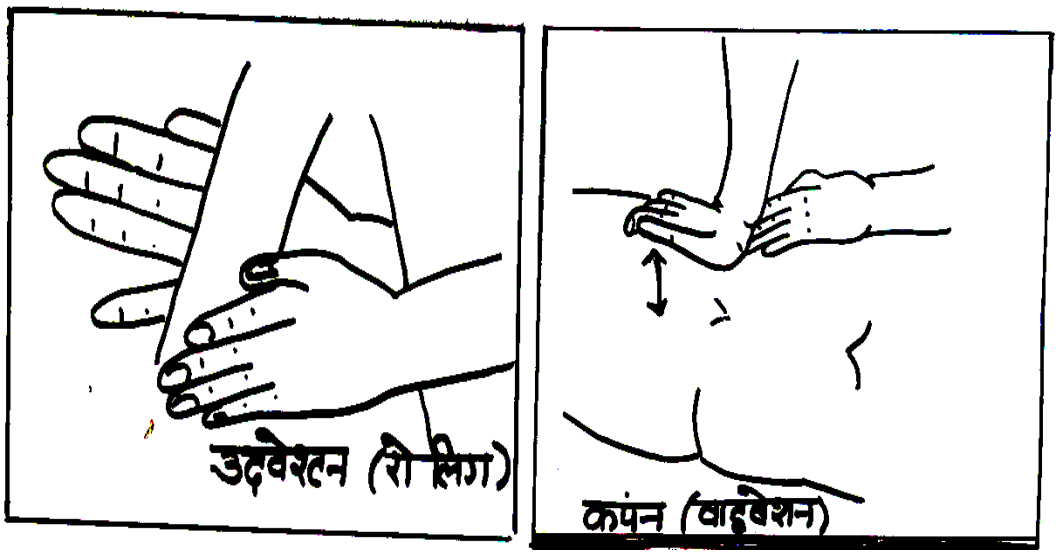

उद्वेश्लन (रो लिंग)

कपंन (वाइब्रेशन)

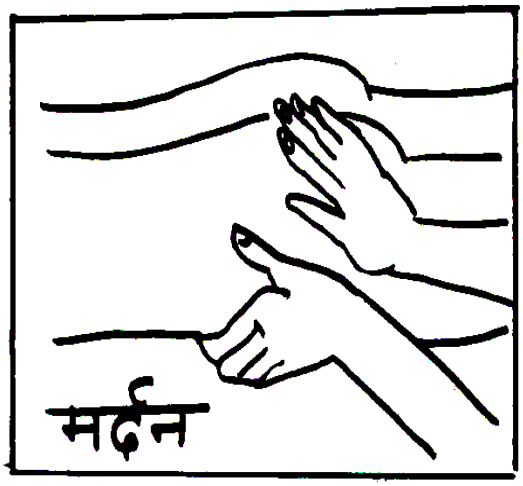

शरीरिक सुन्दरता हेतु मसाज

चेहरे की मसाज फेस मसाज

सिर एवं बालों की मसाज

नेत्र वस्ति अथवा अक्षि तर्पण

कर्ण पूरण

नस्य

पैरो की मसाज

नाखूनो की सुन्दरता हेतु मसाज

मुख्य अभ्यंग (फेस मसाज) :– चेहरे की मसाज को आठ चरणों मे किया जाता है जो कि निम्न प्रकार से है–

1. चेहरे की सफाई
2. चेहरे पर तैल से अभ्यंग
3. चेहरे को हर्बल स्टीम देना तथा हल्के हाथों से दबाना
4. हल्के–हल्के चेहरे को स्कब करना
5. चेहरे की सफाई करके फेस पैक लगाना

6. चेहरे की टोनिंग अथवा रिजुविनेशन करना
7. चेहरे को नमी प्रदान करना
8. चेहरे को पानी से धुलना

इस प्रकार से उपर लिखे गये आठ चरणों से चेहरे की सम्पूर्ण मसाज होती है।सफाई रिजुविनेशन और चेहरे को जल से धुलना रोज करना चाहिए एवं सम्पूर्ण आठ चरणों को हफ्ते में एक बार या महीने में दो बार करना चाहिए।

चेहरे की मसाज से निम्नलिखित लाभ होते है–

1. चेहरे के उतकों को स्वच्छता प्रदान करता है, जिससे त्वचा का सौन्दर्य बना रहता है।
2. त्वचा की सारी परतों को लचीलापन प्रदान कर चेहरे की त्वचा को युवा बनाये रखता है। शारिरिक श्रम व मानसिक तनाव को कम करता है तथा झाईयों को हटकार त्वचा को मृदु एवं कांतिमय बनाता है।
3. चेहरे की त्वचा की झाईयों को हटाता है तथा त्वचा को मुलायम एवं कांतिमान बनाता है।
4. उर्जा को बनाए रखता है।

चेहरे की सफाई :– पसीने इत्यादि से त्वचा की उपरी सतह पर कीटाणु अपना आश्रय बना लेते है। त्वचा की सफाई इन कीटाणुओं को त्वचा की उपरी सतह से हटाकर त्वचा को फेस मसाज के लिए तैयार करती है। आयुर्वेदिक उबटन त्वचा के लिए श्रेष्ठ माना गया है। आयुर्वेदिक उबटन त्वचा के सौन्दर्य को बनाए रखता है तथा वर्ण मे निखार लाता है। इसके लिए कुछ चूर्ण जैसे– धनिया, मंजिष्ठा, नटमेग, तुलसी, चन्दन, संतरे के छिलके का चूर्ण आदि को पानी, दूध या धृत कुमारी के रस के साथ या खुशबूदार तेल

जैसे–गुलाब या चन्दन के तेल के साथ मिलाकर चेहरे में लगाना तेल से बना क्लीनेज़र कहलाता है।

स्वेदन :– स्वेदन आयुर्वेद की सबसे पुरानी विधि है स्वेदन से त्वचा की नमी बनी रहती है यह दिमाग को शान्त बनाये रखने में मदद करता है तथा मांस पेशीयों को तनाव से दूर रखता है। स्वेदन से त्वचा में स्थित अनेकों अपद्रव्य त्वचा रंध्रो के माध्यम से बाहर निकल जाते है तथा त्वचा को कांतिमान बनाते है। स्वेदन को कितनी बार किया जाना चाहिए यह त्वचा की स्थिति पर निर्भर करता है।

रूखी त्वचा के लिए स्वेदन दो हफते में एक बार करना चाहिए इसके लिए दशमूल चूर्ण, गुलाब चूर्ण, चन्दन चूर्ण आदि सामग्री की जरूरत पड़ती है।

सामान्य त्वचा के लिए स्वेदन हफ्ते मे एक बार करना चाहिए। इसके लिए अश्वगंधा चूर्ण, चन्दन चूर्ण, लेमनग्रास चूर्ण आदि सामग्री की जरूरत पड़ती है।

हल्का स्क्रब :– स्कब हल्का होना चाहिए इससे त्वचा की रक्त संचरण की मात्रा एवं गति बढ़ती है और नयी कोशिकाओं के निर्माण मे उत्तेजना आती है। स्क्रब के लिये चोकर, रूई एवं हल्के कपड़े का प्रयोग करना चाहिए।

पोषण मास्क :– पोषण मास्क त्वचा की सतह से ब्लैक हेड और एक्ने को बाहर निकाल कर त्वचा की मांसपेशियों को पोषण प्रदान करता है और त्वचा की कोशिकाओं का पुर्नःनिर्माण कर त्वचा को सुन्दर बनाता है। मांस त्वचा की अन्तिम सतह को संचारित कर नई कोशिकाओं का निर्माण करता है

इसके लिए गोभी, चन्दन, मुल्तानी मिट्टी, एलोविरा, नींबू स्वरस की पिस्टी बनाकर चेहरे पर लगाया जाता है।

फेस पैक :– यह हल्के होते है और इसके प्रयोग से त्वचा में रंग संचरण बढ़ता है तथा यह त्वचा को स्वच्छता एवं पोषकता प्रदान करता है। इसके लिए संतरा, खीरा एवं ताजे फलो के स्वरस का प्रयोग किया जाता है। मास्क और पैक दोनो को ठण्डे पानी से धोना चाहिए और हल्के कपड़े से पोछना चाहिए।

पुर्नःनिमार्ण :– इसका प्रयोग उपर की सभी क्रियाओं की गन्दगी को हटाने के लिए किया जाता है। इसके लिए गुलाबजल, तुलसी के पानी का प्रयोग किया जाता है।

मोइस्चुराइज़र :– सभी प्रकार की त्वचा को नमी की जरूरत होती है। यह गर्मी तथा शुष्क हवा से त्वचा को बचाता है और कीटाणुओं को त्वचा के अन्दर जाने से रोकता है। इसके लिए एलोवेरा, ग्लिस्रिन आदि का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग रात्रि को किया जाना चाहिए।

मिस्ट :– यह क्रिया रूखे मौसम के दौरान त्वचा की नमी को बनाए रखने के लिए की जाती है इससे त्वचा की सुन्दरता बनी रहती है इसके लिए स्वर्ण, चाँदी को पानी में उबाला जाता है और ठण्डा करके इस्तेमाल मे लाया जाता है।

फेस मसाज की विभिन्न विधियाँ :–

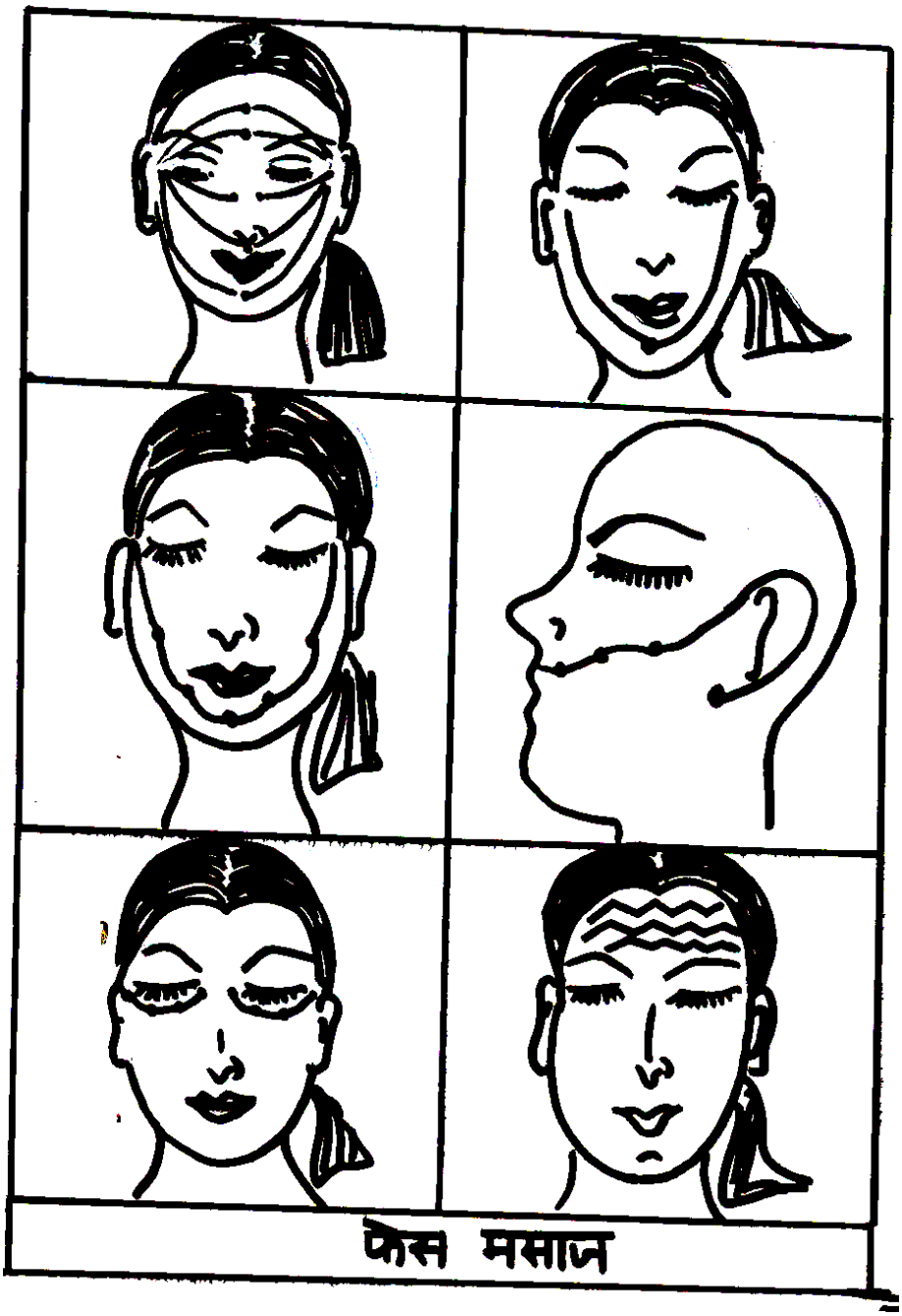

स्टेप 1. हल्का गुनगुना तेल को दोनो हथेली मे लेकर ठुड्डी के बीच से मसाज शुरू करते है।

स्टेप 2. उंगलियों को गात्र के जबड़े के नीचे रक्खे, जबड़े के हड्डी के किनारे रोगी हल्का सा मुँह खोलने को कहे और ठुड्डी व जबड़े को धीरे–धीरे दबाये व छोड़े।

स्टेप 3. अंगुठा जबड़े पर रक्खे, ठोड़ी पर तर्जनी तथा मध्यमा जबड़े के किनारे–किनारे (jaw line पर) जबड़े की हड्डी के उपरी तथा अन्दुरूनी हिस्से पर जोर दे। टेम्पल पर वर्तुल स्ट्रोक देते हुये मसाज करें।

स्टेप 4. तर्जनी उंगली को नीचे के ओठ व ठोडी के उभार के मध्य में रक्खे। मसाज कराने वाले को मुँह खोलने को कहें, इस स्थान पर घड़ी की दिशा में छोटे–छोटे घुमाव बनाते हुये मालिश करें तथा गाल से होते हुये टेम्पल तक मालिश करते हुए बड़े।

स्टेप 5. तर्जना उंगली के अग्रभाग को उपर के ओठ तथा नाक के नीचे रक्खे यह स्थान नासा मर्म का है यहॉ कोमलता से दवाब दे तथा मुख के किनारो तक मालिश करते हुये जाये फिर गाल की हड्डी के नीचे से होते हुये कान के उपर फिर कान के नीचे के बेस में मैस्टॉइड बोनके उभार पर तथा कान के लोब पीछे जाये।

स्टेप 6. व्यक्ति के सर के बाये हिस्से को हाथ से पकड़े फिर दाये हाथ की तर्जनी को नासारन्द्र के बेस पर रक्खे यहॉ से घुमाव दार स्ट्रोक द्वारा गाल की हड्डी तक जाकर फिर कान के पीछे (कान के उपरी भाग से होते हुये) मालिश करते जायें। ऐसा ही व्यक्ति के सर के दाये हिस्से की दाये हाथ से पकड़ कर बाये हाथ से इसी प्रकार मसाज को दोहरायें।

स्टेप 7. दोनों नेत्रों के मध्य भाग से नासा रन्द्रों के उपर (जहां से नाक शुरू होती है) वहॉ से उपर बताये दिशा में मसाज करें।

स्टेप 8. भौहों के अन्दर से भौहों के बाहर तक इन्डेक्स फिंगर तथा अंगुठे से पिन्च (अवपीड करते हुये) मसाज करे।

स्टेप 9. नाक के अग्र भाग से माथे के बीच तक जहाँ पर स्थपनी मर्म होता है हल्के से सीधे–सीधे मसाज करे।

स्टेप 10. माथे पर मसाज करें उपर से नीचे, नीचे से उपर (जिग जैक), यह मसाज माथे के एक छोर से दूसरे छोर तक करें। चहरे की मसाज में कंपन, हल्का ताड़न, इत्यादि स्ट्रोक्स का प्रयोग करें।

भौहों, कान, नाक पर मसाज करते समय अधिक सावधानी बरते तथा बहुत मुलायम कपड़े या रूई का इस्तेमाल करे।

त्वचा की सफाई के लिये चूर्ण :– साबुन, नहाने के जैल, शावर के स्थान पर निम्न का प्रयोग करना चाहिए–

1. मलाई + चोकर – रूखी त्वचा के लिए।
2. गुलाबजल – पित्तज त्वकरोग, तैलीय त्वचा अथवा दाह रोग में।
3. मधु से – कफज, सूजन, खुजली आदि में।

मूंग की दाल, सौंप बेरी, नींबू, चने, बेसन, गुलाब की पंखुड़ी, पोमग्रेनेट पी, जंगली हरिद्रा। इन सभी का चूर्ण लेकर त्वचा के अनुसार गुलाब जल अथवा मधु में घोलकर लेप करने चाहिए।

शिरोभ्यग

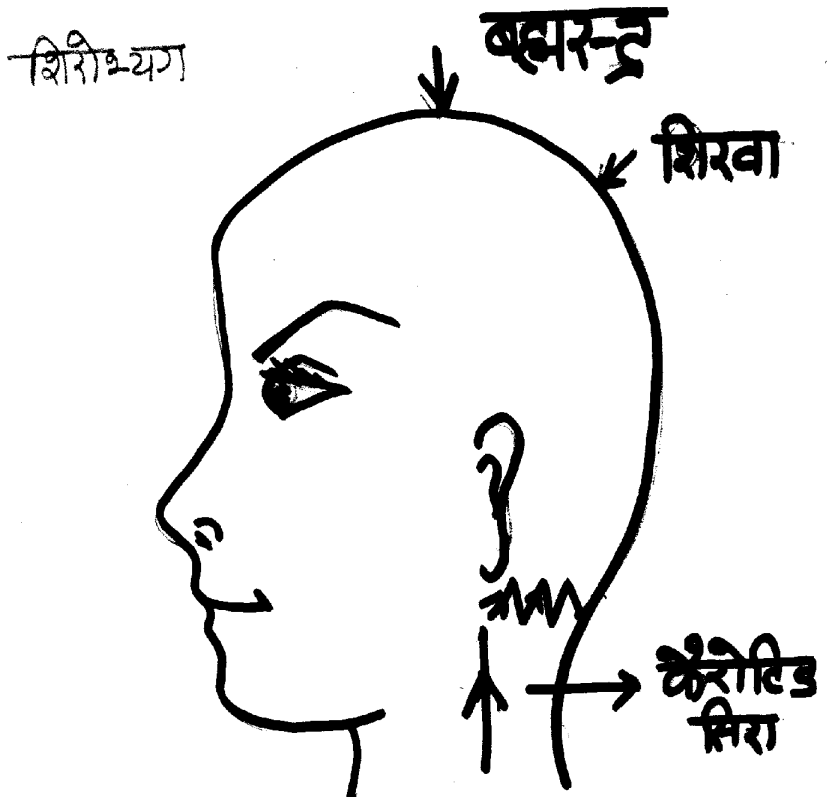

ब्रह्मरन्द्र – (Ant fontanel)

शिखा – (शिवरन्ध्र) Post fontanel

कैरोटिड सिरा – (Comman carotid Artery)

सिर एवं बालों की मसाज :– सिर को उत्तमांग कहा गया है यह तंत्रिका तंत्र का केन्द्र होता है यह गर्भ में बनने वाला पहला अंग होता है। योग मे क्रेनियम के उपरी भाग को ब्रहमरंध् कहा गया है तथा यह दसवे द्वार के रूप मे भी जाना जाता है अतः इसकी मसाज ध्यानपूर्वक करनी चाहिए। सेरीवेरम, ऑख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा सिर के मुख्य अंग है। इन अंगो की मसाज करने से शक्ति प्रदान होती है।

पहला स्थान **ब्रहमरन्ध्र (Anterior fontanel)** है जो बाल्यकाल में मृदु होता है यह धीरे–धीरे कठोर होता रहता है। जन्म के समय इस पर तेल या रूई से बना हुआ पिचु रखा जाता है।

दूसरा स्थान शिवरन्ध (Posterior fontanel) है तथा तीसरा सीान – शिव एवं ग्रीवा का संधि स्थल है इसके भीतर मस्तिष्क का अंतिम भाग शुषुम्ना शीर्ष (Medulla oblongata) तथा शुषुम्ना का प्रारम्भिक भाग (Starling part of the spinal cord) स्थित होता है, अभ्यंग के समय उक्त स्थानों पर अधिक दवाव नहीं चाहिए।

- ग्रीवा के किनारे मन्या धमनी (Common Carotid artery) के उपर की त्वचा पर अभ्यंग करें। अभ्यंग करते समय व्यक्ति की ग्रीवा को दायी तथा बायी ओर झुका ले तथा इस स्थान पर भी दाव देना चाहिए।
- जहां ग्रीवा तथा कपाल मिलते है वहां जिग जैग मालिश करे इससे हल्के–हल्के अंगूठों द्वारा स्ट्रोक दें।
- ब्रहमरन्ध् एवं शिवरंध् दोनों ही स्थलों पर, हथेली पर तैल लेकर घुमाव दार गति के साथ ही अभ्यंग करना चाहिए।
- आगे चित्र में जिस प्रकार किया जा रहा है उसी प्रकार व्यक्ति की प्रकृति अनुसार चयनित तेल द्वारा मालिश करे।

सिर की मसाज के निम्न लाभ है :–

यह सिरर्दद को दूर रखता है

बालों की जड़ों को मजबूत कर झड़ने से रोकता है

गंजेपन (खालित्य)को दूर रखता है, तथा बालों को असमय पकने (पालित्य रोग) से बचाता है।

बालों को मुलायम लम्बा व सुन्दर बनाता है

नेत्र रोगो को दूर रखता है

अनिद्रा मे अत्यन्त लाभकारी है

शाम के समय सिरो मसाज करने पर दिन भर की थकान मिट जाती है और अच्छी नींद आती है।

शिरोअभ्यग

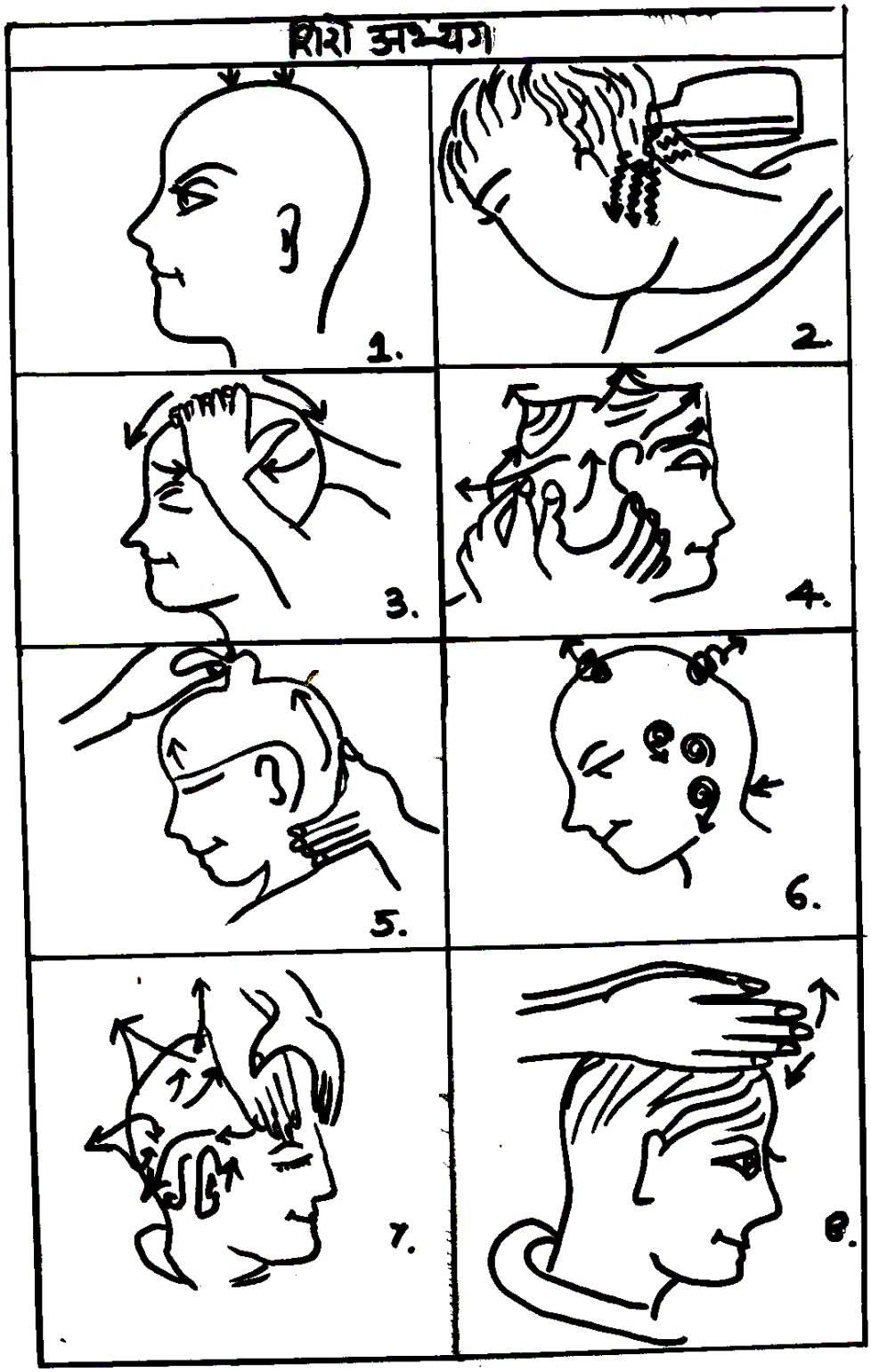

सिर मसाज की विधि :–

सर्वप्रथम सिर के उपर उचित मात्रा मे तेल डाले फिर दोनो हाथो की उंगलियों से तेल को सम्पूर्ण सिर मे फैलाये फिर सिर को दोनो हाथों से आगे से पीछे और पीछे से आगे की ओर दबाते है। सिर की मसाज इस प्रकार करे कि तेल बालों की जड़ों तक अच्छी प्रकार पहुंच जाये इससे बालों की जड़ो को पोषण मिलता है तथा सिर की सतह को भी फायदा मिलता है इससे बाल भी नहीं झड़ते है। इससे मानसिक तनाव भी कम होता है। सिर की मसाज से मस्तिष्क के चारों तरफ तथा स्पाइनिल कोर्ड में उपस्थित स्पाइनिल फ्लयूड को भी गति प्रदान होती है।

भौहों तथा माथे की मसाज से आँखो की रोशनी तथा मन की एकाग्रता बढ़ती है। सिर की मसाज सम्भवतः प्रत्येक दिन की जानी चाहिए। सिरोधारा, दुग्ध धारा, तक्र धारा, सिरो वस्ति, नस्य, नेत्र वस्ति, कर्णपूरण यह सभी क्रियाओं पंचकर्म विशेषज्ञ की देख–रेख में की जानी चाहिए।

पादाभ्यंगः– रात्रि को सोने से पहले पैरो मे तेल लगाना अन्यन्त लाभकारी होता है यह मनुष्य की आँखो तथा सभी अंगो को स्वस्थ रखता है। आचार्य बाग्भट्ट कहते है कि चार सिराये पैर की तलो से होते हुए सिर से जुड़ती है जो कि दिन भर के काम–काज की अधिकता से प्रभावित होती है और अक्षि रोग उत्पन्न करते है। पैरो (कर्म इन्द्रियाँ) और आँख (ज्ञान इन्द्रियाँ) एक दूसरे से दूर होने पर भी यह एक दूसरे से जुड़े हुये है।

तेल– व्यक्ति की प्रकृति तथा रोग के अनुसार ही औषधीय तैल का चयन करना चाहिए। जिस व्यक्ति का पादाभ्यंग होना है उसे पीठ के बल लिटाकर अभ्यंग कर्मी तलवों के सामने खड़ा हो जाये अथवा व्यक्ति के किनारे कुर्सी पर बैठे। हथेली पर अच्छी मात्रा में तेल लेकर तलवों पर घर्षण करें फिर पैर

के पृष्ठ भाग पर तेल लगाकर नीचे से उपर (पादांगुल के बेस उपर की तरफ) अभ्यंग करें, पृष्ठ से अधर तल पर स्ट्रोक्स को लाये। पादाभ्यंग करते समय अधर तल पर पादागुल को दबाये, बेस दबाये, फिर एक तर्जनी तथा अगुष्ठ का प्रयोग करते हुये मसाज करें, पैरों को फ्लेक्स तथा एण्टी फ्लेक्स करें पादागुल को हाथों से पकड़कर फ्लेक्स तथा एक्सडेन्ड करें। एड़ियों पर गोलाकार स्ट्रोक्स से मसाज करें दवाब दें पंजों को दोनों हाथों में लेकर रोलिंग करें। एड़ी से पंजे की तरफ जिग जैग गति से मसाज करते हुये जाये। पैर को एक हाथ से पादांगुल दूसरे हाथ से एड़ी पकड़ कर लौक कर दवाब दें।

पादाभ्यग

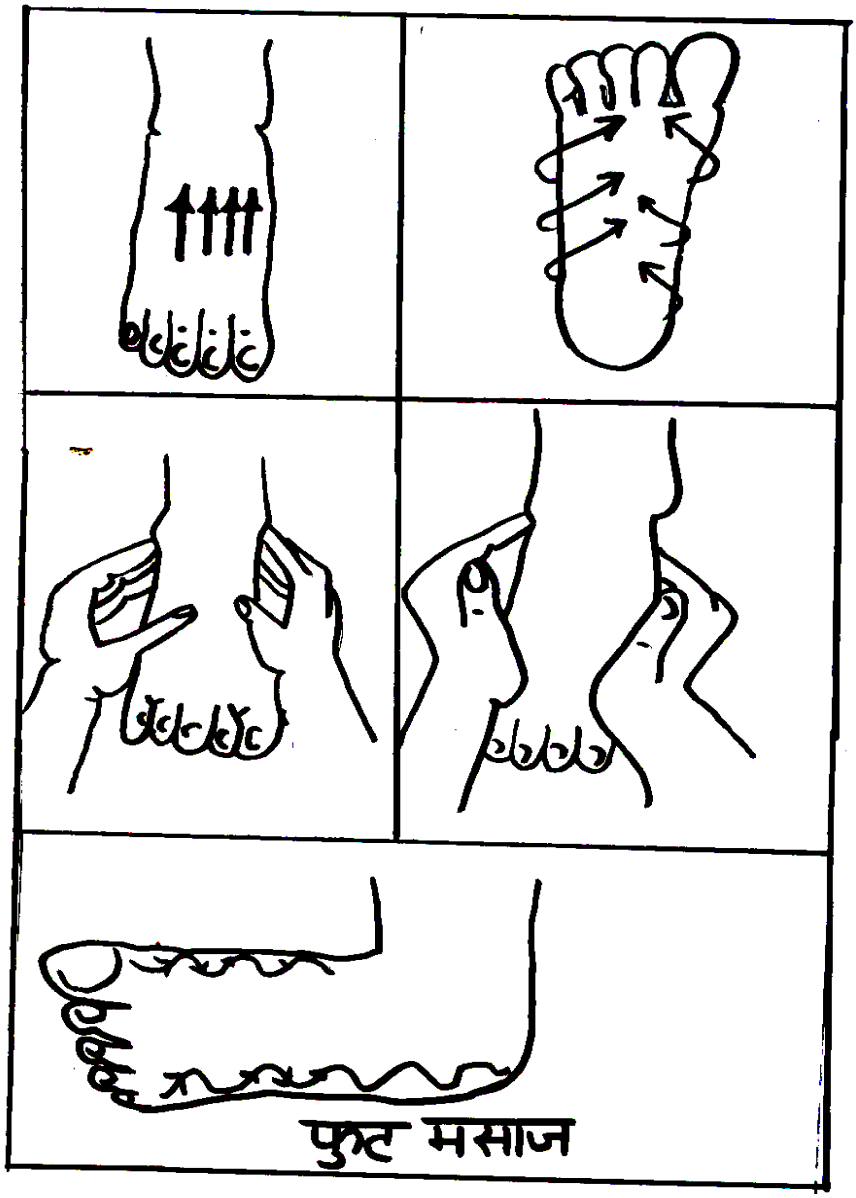

पादाभ्यंग से लाभ :–

- पैरो की त्वचा को दृढ़ता प्रदान करता है।
- लम्बे समय तक खड़े रहने मे सहायता मिलती है।
- पैरो का कड़ापन, रूखापन दूर होता है तथा थकान दूर करता है।

- फटी एड़िया, बेरीकोज़ वेन्स, आँखो की रोशनी को सही करता हैं।
- रात्रि के समय पादाभ्यंग से सुख पूर्वक निद्रा आती है।

नाखून तथा उसकी मालिश :–

नाखून अस्थि धातु के मल होते है। स्वस्थ नाखून गुलाबी रंग तथा चिकना एवं अच्छे आकार का होता है। नाखून का वास्तविक आकार किसी दोष विशेष पर निर्भर करता है। वातिक नाखून टेढ़े आकर के कड़क तथा बेरंग होते है। पैतिक नाखून गोल, मृदुल तथा गुलाबी रंग के होते है। कफज नाखून चौकोर, मोटे तथा मजबूत होते है। नाखून पर सफेद निशान होना कैल्शियम, जिंक की कमी को दर्शाता है। कटे नाखून मिनरल्स की कमी को दर्शाते है। लटके नाखून प्रोटीन, विटामिन को दर्शाते है। कड़े नाखून विटामिन ए या आयरन की कमी को दर्शाते है। पीले नाखून यकृत रोग को दर्शाते है। नीले नाखून फुफ्फुस एवं हृदय रोग को दर्शाते है। बेरंग नाखून खून की कमी को दर्शाता है। सुन्दर एवं स्वस्थ नाखूनो के लिए प्रोटीन, मिनरल्स, आयरन, कैल्शियम, विटामिन डी और ई की जरूरत होती है। नाखून का तेल अभ्यंग नाखून की सुन्दरता के लिए जरूरी है। रोज अँगुलियों को गुनगुने जल में डुबोकर हल्के से ब्रश से नाखून को साफ करके उनपर शीशम का तेल लगाना चाहिए।

आयुर्वेदिक तेल मसाज

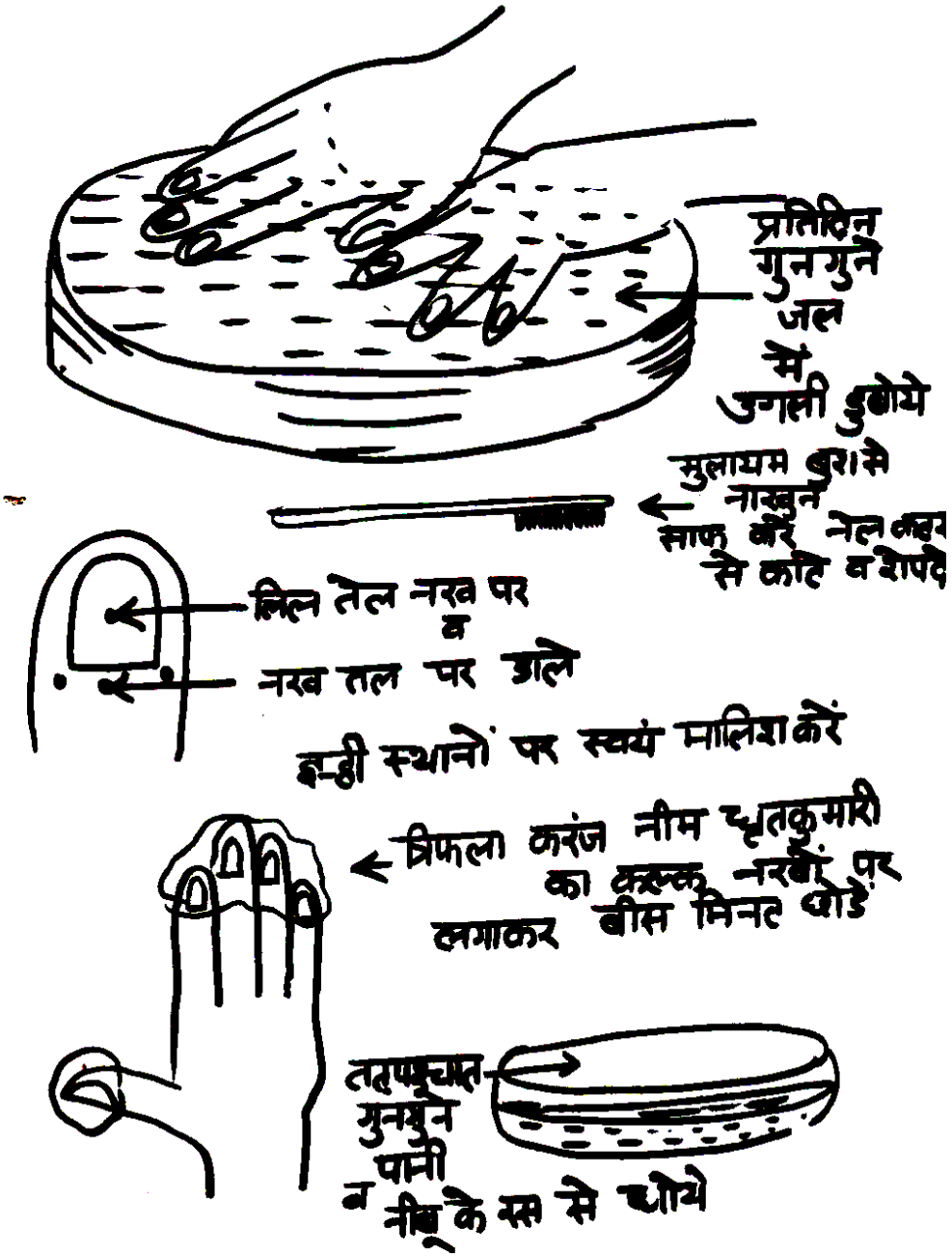

अभ्यास

प्रश्न 1. अभ्यंग के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन करते हुए अभ्यंगादि के प्रकार का उल्लेख एवं वर्णन करें।

प्रश्न 2. अभ्यंग के काल पर प्रकाश डालते हुए अभ्यंग के गुण एवं लाभ लिखे।

प्रश्न 3. प्रकृति अनुसार अभ्यंग का वर्णन करते हुए वात, पित्त, कफ प्रधान व्यक्तियों के लिए तेल निर्माण हेतु औषध द्रव्य का उल्लेख करें।

प्रश्न 4. अभ्यंग में सहलाने या थपथपाने के प्रकार तथा विधि का चित्र रहित वर्णन करें।

प्रश्न 5. मुख अभ्यंग के आठ चरण व मुख अभ्यंग से लाभ लिखिए।

प्रश्न 6. त्वचा की सफाई में उपयुक्त कुछ चूर्ण लिखें।

प्रश्न 7. शिरोभ्यंग का वर्णन करें।